श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष ४ अंक ७ जुलाई २०१६ बुद्धजी शाका ३४१ विक्रम सवंत २०७६ पृष्ठ संख्या ३२

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान २. नियमित स्वाध्याय ३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ ५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार ७. दृढ़ संकल्प ८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com **Youtube**: SPJIN **Website**: www. spjin.org
Twitter : @Raajan Swami **Whats App**: +917533876060 ;

अनुक्रमणिका

1.	सम्पादकीय – बीतक	कृष्ण कुमार कालड़ा	1
2.	दान क्यों करें?	आचार्य सुभाष	2
3.	जो होवे अरवा अर्स सुभान	राज बाला	5
4.	सखी री जान बूझ क्यों खोइए, ऐसा अलेखे सुख अखण्ड	जै किशन निजानंदी	11
5.	सैयां हम धाम चले	बब्बू	16
6.	माधुर्यता का महत्त्व एवं रहस्य	ज्योति	19
7.	पूज्य श्री राजन स्वामी जी के प्रवचनों के प्रेरणास्पद अंश	कृष्ण कुमार कालड़ा	22
8.	कुछ घरेलू नुस्खे	आचार्य सुभाष /धरमराज	24

ज्ञानपीठ सुविचार

युगल स्वरूप की छवि को अपनी आत्मा के
धाम हृदय में बसाये बिना
आत्म जागृति का लक्ष्य अधूरा है

सदस्यता शुल्क

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 130 रू.	.....
आजीवन 1200 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के
व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक,
प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232
सम्पर्क सूत्र–8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.co

सम्पादकीय

बीतक

प्रत्येक वर्ष श्रावण मास की पंचमी से श्री निजानन्द सम्प्रदाय के प्रत्येक मंदिर में छोटे या बड़े रूप में बीतक चर्चा का आयोजन पारम्परिक रूप से किया जाता है। इस दिन वि.सं. 1751 में श्री जी अपनी लगभग 75 वर्ष की दर्शन लीला समाप्त कर समाधिस्थ हो गये थे तथा इसके पश्चात पन्ना जी में उनके सिंघासन पर श्री कुल्जुम स्वरूप साहब को उनका वांड्गमय तथा ज्ञानमय कलेवर मानकर पधराया गया था। यहीं से इसके पूजन की परम्परा प्रारम्भ हुई है। अतः हमें ब्रह्मवाणी को ही अन्तिम सत्य मानकर अंगीकार करना चाहिये।

यहां यह प्रश्न उठता है कि बीतक से हमारा मूल तात्पर्य क्या है तथा इसका आयोजन क्यों किया जाता है। वस्तुतः बीतक कोई मानवीय इतिहास नहीं है जिसमें किसी कथानक का वर्णन हो। ऐतिहासिक वृतांत का तापर्य होता है जो बीत चुका है। परन्तु बीतक के सन्दर्भ में ऐसा नहीं कहा जा सकता है। वस्तुतः ब्रह्मात्माओं का अक्षरातीत श्री राज जी से जो सम्बन्ध अनन्त काल से रहा है : ब्रज, रास और उसके पश्चात इस जागनी ब्रह्मांड में चौथे और पांचवें दिन की लीला में जो कुछ हुआ, वर्तमान में छठे दिन की लीला में जो हो रहा है तथा इसके पश्चात् सातवें दिन की लीला में जो होना है, यह सम्पूर्ण घटनाक्रम बीतक कहलाता है। बीतक को सामान्यतः हम चौथे, पांचवें व छठे दिन की लीला समझकर बीती हुई बातें कह देते हैं परन्तु यह उचित नहीं है। आत्माओं के साथ तो मूल स्वरूप श्री राज जी की लीला आज भी चल रही है तथा अनन्त काल तक चलती रहेगी। अतः जो अतीत में घटित हुआ या जो वर्तमान में हर पल घटित हो रहा है तथा भविष्य में जो घटित होने वाला है, यह सब बीतक कहलाता है। इसी प्रकार, बीतक को सद्गुरु श्री देवचन्द्र जी या महामति श्री प्राणनाथ जी की जीवन गाथा नहीं समझना चाहिये बल्कि मूल–मिलावे में विराजमान मूल स्वरूप अक्षरातीत श्री राज जी ने श्री देवचन्द्र जी तथा श्री मिहिर राज जी का तन धारण कर अपनी आत्माओं को जगाने के लिये जो किया, उसे बीतक कहा जाता है।

बीतक की रचना ब्रह्ममुनी श्री लालदास जी के तन में बैठकर स्वयं अक्षरातीत श्री राज जी ने की है – वही स्वरूप जो पहले श्री देवचन्द्र जी के तन में और बाद में श्री मिहिर राज जी के धाम ह्दय में विराजमान होकर लीला कर रहे थे। समपर्ण की यही पराकाष्ठा है – कलम तो चली श्री लालदास जी की परन्तु वास्तव में कहने वाले स्वयं धाम धनी हैं। इसलिये सम्पूर्ण बीतक में 'महामति' की छाप है।

आज यही बीतक हम सुन्दरसाथ का मार्गदर्शन कर रही है। हर वर्ष इसके आयोजन की परम्परा ने हमारे तात्विक ज्ञान को जीवन्त बनाये रखा है। यह हमें उस गौरवमय क्षण की अनुभूति कराती है कि कैसे इस मायावी जगत में परमधाम का ब्रह्मज्ञान अवतरित हुआ तथा हमें इसे कैसे जन–जन तक पहुंचाना है। प्रणाम जी।

कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

दान क्यों करें?

आचार्य सुभाष, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

हमारी भारतीय संस्कृति में दान को बहुत बड़ा महत्व दिया गया है। अपनी आमदनी का दश अंश दान के रूप में खर्च करना अनिवार्य माना है। हमारे पूर्वज मनीषियों ने दान का धर्म के साथ अटूट सम्बन्ध जोड़कर उसे आवश्यक धर्म–कर्तव्य घोषित किया था। दान की बड़ी–बड़ी आदर्श गाथाएं हमारे साहित्य में भरी पड़ी हैं और आज भी हम किसी न किसी रूप में दान की परम्परा को निभा रहे हैं। गरीब से लेकर अमीर, सभी अपनी–अपनी स्थिति के अनुसार कुछ–न कुछ दान करते ही हैं। मानो दान देना हमारे स्वभाव का एक अंग ही बन गया हो।

लेकिन अन्य परम्पराओं की तरह ही दान की परम्परा में भी दोष उत्पन्न हो गये हैं। दान का सदुपयोग न होकर दुरुपयोग अधिक होने लगा है। दान के पीछे जो श्रद्धा, सद्भावना, त्याग तथा सदुपयोग की वृत्ति होनी चाहिये, उसकी जगह कई विकृतियों ने लेली है। दान क्यों करना चाहिए, दान किसे देना चाहिये, कैसे देना चाहिये, यह बहुत ही कम लोग जान पाते हैं। गीताकार ने दान की व्याख्या करते हुए कहा है–

'दातव्यति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।'
'देशे कालेच पात्रे च तद्दानं सात्विकं स्मृतं।'
'यत्ततु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दश्य वा पुनः।'
'दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम्'।।
'अदेशेकाले यद्दानमात्रेभ्यश्च दीयते।'
'असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम्'।।

"दान देना मनुष्य का कर्तव्य है, ऐसा जानकर बिना बदले की भावना से देश, काल, पात्र का ध्यान रखकर जो दान दिया जाता है वह सात्विक दान है।"

"क्लेश पाकर या बदले की भावना से किसी कामना पूर्ति के लिये दिया जाने वाला राजसिक दान है।"

"जो दान बिना सत्कार के, देश–काल–पात्र का ध्यान रखे बिना, उपेक्षा या तिरस्कार के साथ दिया जाता है, वह तामसिक दान है।"

व्यवहारिक क्षेत्र में भी दान के पीछे मुख्यतया तीन भावनायें निहित होती है। एक दान वह जो श्रद्धा से प्रेरित होकर किसी सामर्थ्यवान यथा–विद्वान, तपस्वी जननेता, देशसेवक,

वैज्ञानिक, कलाकार आदि को दिया जाता है। इसमें श्रद्धा ही मुख्य होती है। दूसरे प्रकार का दान दया प्रेरित होकर दीन–हीन सामर्थ्य–विहीन लोगों को दिया जाता है। तीसरे प्रकार का दान अहंकार से प्रेरित होकर अपनी दानशीलता की ड्योढ़ी पिटवाने के लिये, नाम यश खरीदने के लिए, किसी लाभ के लिए, बड़ा बनने के लिए दिया जाता है।

अब हम देख सकते हैं कि हमारे समाज में दान की क्या स्थिति है? दान का उत्कृष्ट स्वरूप बहुत कुछ विलुप्त होता जा रहा है और उसके स्थान पर राजसिक, तामसिक दान की बाढ़–सी आ गई है और वह उसी तरह समाज के अंग नहीं लग पाता, जिस तरह अतिसार के रोगी को दिया जाने वाला भोजन। एक ओर गुलाब की खेती सूखी जा रही है और दूसरी ओर हम काँटे, झाड़झंखाड़ों को सींच रहें हैं। दान के नाम पर कैसी विडम्बना व्याप्त है।

सच तो यह है कि दान के पीछे दातापन की भावना ही न होनी चाहिए। यह एक जीवन का स्वाभाविक कर्तव्य है। कालिदास ने कहा है।

'"अदानं हि विसर्गाय सताँ वारिमुचामिव।"'

जैसे बादल पृथ्वी पर से जल लेकर फिर पृथ्वी पर ही वर्षा देते हैं, उसी तरह सज्जन जिस वस्तु का ग्रहण करते हैं, उसका त्याग भी कर देते हैं।" समाज में, संसार में से ही हमने संग्रह किया है, प्राप्त किया है, तो उसे समाज के लिए, संसार के लिए त्याग भी कर देना होगा। कितना सहज आधार है दान का । फिर "मैं दान कर रहा हूँ" ऐसा कहने का अधिकार भी कहाँ रह जाता है।"

विनोबा के शब्दों में "दान के मानी फेंकना नहीं वरन् बोना है।" समाज के धरातल पर दान एक प्रकार की खेती है। जो दिया जाता है, वह परिपक्व होकर समाज की उन्नति, कल्याण, विकास में सहायक होना चाहिए। दान से समाज का शरीर पुष्ट होना चाहिए, तभी वह दान है। अन्यथा दान के नाम पर अपने धन, सम्पत्ति साधनों को नष्ट करना है, व्यर्थ आँवाना है। ज्ञान–दान में लीन, विद्वान, परोपकार में लीन, कर्मवीर, ज्ञानवृद्धि में सहायक तत्वज्ञानी, अनेकों जन–सेवकों के अभावों की पूर्ति करना समाज को ही भोजन देना है। 'इन परमार्थकारियों को दिया गया दान खेत में बोये गए बीज की तरह कई गुना होकर समाज को ही मिल जाता है।जो ऐसे दान का अपमान और विरोध करता है,उसका पतन निश्चित है।'

विनोबा ने कहा है "तगड़े और तन्दुरुस्त आदमी को भीख देना, दान करना, अन्याय है। जो दान अनीति और अधर्म को बढ़ाता है, वह दान नहीं वह तो अधर्म ही है। विवेकशील लोग अनुमान लगा सकते हैं कि इस तरह की अन्धदान प्रवृत्ति के कारण समाज में बहुत से लोगों ने भीख माँगकर, दान के ऊपर ही गुजारा करने का जन्म सिद्ध अधिकार–सा मान लिया है। हमारे देश में भिखमंगों की एक जमात–सी खड़ी हो गई है, जिनका पेशा ही दान लेना और उससे मौज करना बन गया है। 'हमारे समाज के एक वर्गीय लोगों ने भी धर्म के नाम पर गरीबों और धनिकों से धन एकट्ठा करके

आधे से अधिक धन राशि स्वयं के सुख–सुविधा में उपभोग किया है।'

देश और समाज के लिये, जनकल्याण के लिए गरीब जरूरत मन्द लोगों की सहायता के लिए, लोकसेवी परमार्थरत सज्जनों की अभावपूर्ति के लिए हृदय खोलकर दान दीजिए। लेकिन जिन्होंने दान लेना अपना पेशा बना लिया है, जो दान के माध्यम से अपने लिए धन जायदाद एकत्र कर रहे हैं, जो दान के पैसे से खूब मौज गुलछरें उड़ाते हैं, तरह–तरह की बदमाशियाँ करते हैं, उन्हें एक फूटी कौड़ी भी न दें। अन्यथा धन नाश के साथ–साथ आपको अनेकों पापों का भागी बनना पड़ेगा, यह ध्रुव सत्य है।

बहुत से लोग किसी मन्दिर धर्मशाला में कुछ रुपया देकर अपने नाम का पत्थर लगाने में, किन्हीं धर्म संस्थाओं को कुछ धन देकर अपना नाम पत्र पत्रिकाओं, सभा समितियों में रोशन कर लेने को ही दान समझते हैं। कुछ लोग अपनी कामनापूर्ति का दाव सफल हो जाने पर दान का पुण्य लूटते हैं। कई लोग अपनी खुशामद कराकर, अपनी दान–वीरता, धर्मशीलता के गुणगान के लिए दान करते हैं। यह तो एक तरह का व्यापार है, जहाँ दान के बदले यश, नाम, कीर्ति, कामनापूर्ति, अपनी खुशामदगिरी, सेवा–चाकरी खरीदी जाती है।

वेद में कहा हैं–,एक हाथ से कमाओं हजार हाथों से बाटों अर्थात जन–जन में अभाव, शिक्षा से रहित जन जातियों तक पहुंचाना है।यही अर्थ है हजार हाथों से बांटने का।

ईसामसीह ने कहा था–"तुम्हारा दायाँ हाथ जो देता है उसे बाँया हाथ भी न जान पाये।" किसी को आपके सहयोग सहायता की आवश्यकता है, कोई जरूरतमंद–अभावग्रस्त, परेशान है तो चुपचाप उसकी सहायता कर दीजिए कि दान लेने वाला भी न जान पाए। इसीलिए गुप्त दान को सर्वोपरि माना गया है। स्मरण रहे दान के बदले यदि आपको तुरन्त ही कोई लाभ मिल गया, चाहे वह नाम, यश, कीर्ति या सामाजिक महत्व ही क्यों न हो तो आपके दान का भी मूल्य गिर गया। शास्त्रकारों ने श्रेष्ठ दानी उसे ही बताया है जो बिना माँगे और बिना प्रकट किए हुए ही दान करता है।

बहुत से लोग दूसरों को दीन–हीन,गरीब असहाय, मानकर दान करते हैं, मानो वे दूसरों के साथ बड़ा उपकार कर रहें हों। लेकिन इस तरह का भेदभाव दान की पवित्रता सात्विकता को नष्ट कर देता है। अहसान, बड़प्पन जताकर, दूसरे को निम्न कोटि का समझकर, उपेक्षा या तिरस्कार के साथ दिया गया दान तामसिक दान है। दूसरे लोग भी आपकी ही तरह समाज के एक अंग हैं। यह ठीक है कि अपने प्रयत्न या संयोगवश साधन संपत्ति आपके पास एकत्र हो गई है, लेकिन वह सम्पूर्ण समाज की, धरती की ही तो है। आवश्यकता पड़ने पर समाज को लौटा देने में आपको गर्व, बड़प्पन की भावना नहीं रखनी चाहिए।

आपका दान समाज के लिए जितना उपयोगी होगा, उतनी ही उसकी पवित्रता, सात्विकता बढ़ेगी और पात्र के साथ–साथ आपका भी कल्याण सध सकेगा। सोच समझकर पात्र और उसकी आवश्यकता को देखकर, उपयोगिता को समझकर, बिना किसी, लाग लपेट के शुद्ध हृदय से दान दीजिए और समाज का भला कीजिए।

जो होवे अरवा अर्स सुभान

राज बाला, रूड़की

प्यारे सुन्दरसाथ जी! धर्म पथ के अनुगामी साथियों के चरण कमल में प्रणाम जी। इस नश्वर अनित्य क्षण–पतिक्षण क्षरण को प्राप्त संसार में प्रत्येक प्राणी सुख–शान्ति की कामना करता है और इसी लक्ष्य की प्राप्ति में अपने जीवन की आधी से अधिक आयु गँवा देता है। फिर भी उसे स्थायी सुख–शान्ति प्राप्त नहीं हो पाती है। साथ जी! रेगिस्तान में जब बालू की रेत पर सूर्य की किरणें पड़ती है, तो दूर से देखने में जलाशय जैसा दिखाई पड़ता है। ऐसे रेगिस्तान में यदि हिरन पानी की खोज में आ जाए तो वह उसी नजरों को देखकर अपनी प्यास बुझाने का प्रयत्न करता है और दौड़ता है, पर जल प्राप्त नहीं होता क्योंकि जल तो होता ही नहीं केवल आभास होता है। और बेचारा हिरण तड़प–तड़प कर प्यासा रह जाता है और अन्त में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। सुन्दरसाथ जी ये ही हाल संसार के जीवों का है।

माया की तृष्णाऐं कभी शान्त नहीं होती। आग में जितना घी डालते हैं, अग्नि उतनी तेज हो जाया करती है। वैसे ही इच्छाऐं बढ़ती जाती हैं। ये इच्छाऐं सुख भोगने की होती हैं– परन्तु (हरिण इच्छा) मृगतृष्णा की भांति जीव को मृत्यु को प्राप्त करा देती हैं। इस विषय में भृतहरि ने कहा है– तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा । तृष्णा कभी भी बूढ़ी नहीं होती। किन्तु इसके वशीभूत हर प्राणी शारीरिक, मानसिक, बोधिक दृष्टि से वृद्ध हो जाता है। तृष्णायें से सुरसा की भांति मुँह खोलकर खड़ी रहती हैं और सभी प्राणियों को भीतर करती जाती है। महर्षि कपिल जी अपने सांख्य दर्शन में कहते हैं कि– कुत्रापि कोऽपि सुखी न– संदर्भ ''इस संसार में कोई भी कहीं पर भी सुखी नहीं है।''

पारब्रह्म के प्रेम और शाश्वत सुख–आनन्द को पाने की लालसा में बड़े बड़े ऋषि मुनि तपस्वी तक भी अन्त में मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं– पुनर्पि जन्मं पुनर्पि मरणं पुनर्पि जठराग्नि सहनं– परन्तु पारब्रह्म की प्राप्ति हो नहीं पाती है। ज्यादा से ज्यादा बैकुंठ शून्य निराकार तक प्राप्त हो जाते हैं। पुण्य क्षीण के बाद फिर पृथ्वी गामी होना पड़ता है। ये सब जीव अज्ञानता के अन्धकार में टिमटिमाते दीये की रोशनी के समान शास्त्र ज्ञान का सहारा लिए होते हैं।

राजा भतृहरि के जीव ने सात जन्मों तक सन्यास लिया, परन्तु बार–बार रानी पिंगला के प्रेम

(मोह) पाश में पड़ जाने के कारण सन्यास भेष उतारकर गृहस्थी जीवन अपनाना पड़ा। गुरू गोरखनाथ जी इस रहस्य को समझ चुके थे, इसलिए उन्होंने रानी पिंगला और भतृहरि के बीच मन–मोटाव का कारण पैदा किया तब सातवें जन्म में सन्यास लेकर भतृहरि अपने लक्ष्य की पूर्ति कर सके। सांसारिक तृष्णाऐं अनेक रूपों में प्राणियों को अपने जाल में फंसाती रहती हैं।

मुख्य रूप से ये तृष्णायें तीन प्रकार की हैं– 1. लोकेषणा 2. वित्तेषणा 3. दारेष्णा।

1. लोकेष्णा– मान, प्रतिष्ठा (ख्याति), प्रसिद्धि की तृष्णा।
2. वित्तेष्णा– धन, सम्पत्ति, वैभव की प्राप्ति की तृष्णा।
3. दारेष्णा– पुत्र–पौत्र, परिवार जन, अधिक शिष्यों की तृष्णा। सगे सम्बन्धियों के मोह पाश में फंसाने वाली तृष्णा

तीन गुण, पंच तन्मात्राँए, पंच तत्व, दशों इन्द्रियों को हथियार बनाकर माया प्रपंचों की सेना लेकर जीव के साथ क्या–क्या खेल खेलती है! माया इतनी शक्तिशाली है कि गृहस्थ से सन्यास लेने पर भी नहीं छोड़ती। गृहत्यागी सन्यासी के संग आती है– राग त्याग वैरागी को शिष्यों में मानी मर्यादी बनाती है।

लोक लाज मरजादा छोड़ी, तब ग्यान की पदवी पाई।
एक आग जो छोटी बुझाई, तो दुजी मोटी लगाई।। कि0 4/5

प्यारे धर्म प्रेमियों! जब तक हमारा अन्तः करण पूर्ण रूप से शुद्ध नहीं होता है, तब तक ब्रह्मज्ञान व प्रेम में प्रवेश नहीं कर सकता है। प्यारे साथ जी! जब ब्रह्म आत्माएं 52 दिन के विरह के बाद बांसुरी के नाद को सुनकर अखण्ड वृन्दावन में माया के शरीर छोड़कर पहुंची, वहाँ पर रास के स्वरूप ने कहा था कि तुम अपने घर–परिवार और अपने पतियों को त्यागकर किसी परपुरूष के पास क्यों आ गयी हो?तुम तो कुलवन्ती नारियाँ हो। अन्धे, बहरे, निर्धन, कुरूप, कर्कस, अधम पति का भी त्याग भारतीय नारी के लिए महापाप है, ऐसा हमारे वेद शास्त्र कहते हैं। इतना सुनते ही सात्विक सखियां प्रायः मूर्छित हो गयी, तब तामसी सखी सिरदार इन्द्रावती जी ने कहा कि आपने जो हमें सिखापन दिया है, वह अपने पास रखिए क्योंकि आप सर्व सुन्दर, सर्वोपरि उत्तम पुरूष परमात्मा हो और आत्मा के प्रियतम आनन्द घन हो। आपके समान इस ब्रह्माण्ड में ही नहीं कहीं भी कोई दूसरा नहीं है। आपको छोड़कर हम कहीं नहीं जा सकती। इतने दृढ़ वचन सुनकर सभी सखियां चेतन हो गयी और सबने कहा कि माया के ब्रह्माण्ड में कुछ माया का लेश था, अब हम सब समर्पित है। तब वालाजी ने कहा कि मैं तुम्हारी प्रेम की परीक्षा ले रहा था कि तुम प्रेम के पूर्ण पात्र हो या नहीं। तुम्हारे हृदय में पूर्ण समर्पण है। अब आओ रास की रामते खेलें।

प्यारे सुन्दरसाथ जी! जब तक हृदय में प्रेम रूपी सरोवर की रस धारा प्रवाहित नहीं होती तब तक यह माया छूटती नहीं है। ब्रह्मसृष्टि भी जो सुरता के रूप में इस माया के ब्रह्माण्ड में उतरी हैं

वह ऐसे ही जीवों के ऊपर बैठकर माया के दृश्य देख रही हैं। हर पल आत्मा जीव को झकझोरती है। जीव को प्रेम समर्पण के रास्ते पर चलकर सोहागी बनाने को कहती है, परन्तु लाखों जन्म के संस्कारों से ग्रसित होने से पटरी पर नहीं आता। किन्तु वैराग्य और अभ्यास के द्वारा विरह में डूबकर देर सवेर उसको, प्रेम–समर्पण का मार्ग अपनाना ही पड़ेगा। इसे हम एक उदाहरण से समझते हैं– जैसे लोहा बहुत कुरूप और कठोर होता है, परन्तु जब वह अग्नि के समक्ष आता है और तेज अग्नि में जलता है, तो स्वयं अग्नि का स्वरूप हो जाता है। तब उस पर हथौड़ा पड़ता है तो वही लोहा किसी भी हथियार या औजार के रूप में अपने को प्रस्तुत करता है।

यहाँ दोष लोहा में नहीं था देरथी, अग्नि में तपने की। ये विरह–प्रेम की अग्नि से तपने पर आत्म रूप हो ही जाएगा– ''जीव टल होसी आत्म'' प्र0 हि0 इसलिए सुन्दर साथ धैर्य नहीं खोना चाहिए। क्योंकि जिस जीव पर आतम बैठी है वह विकारी होते हुए भी आतम सहयोगी बनेगा। इसलिए प्रतिदिन अपनी दिनचर्या में से कुछ घड़ियां निकालकर युगलस्वरूप की शोभा को दिल में बसा लेने से हमारा आत्मिक प्रेम प्रगाढ़ होता है और जिस दिन प्रेम की अग्नि प्रचण्ड हो जाती है, तो जीव के कर्म रूई की भाँति जलकर राख हो जाएंगे।

समाधिनिर्धतमलस्य चेतसो, निवेशितस्यात्मनि यत्युखं भवेत् ।
न शक्येतवर्णायेतं गिरा तदा, स्वपंन्तदन्तः करणेन गृहयते ।।धवला, पु0 13 गा0 56/93–94

(चितवनी) ध्यान समाधि द्वारा जिसके अविद्या आदि मल नष्ट हो जाते हैं, उसे अपने हृदय में परब्रह्म का इतना अधिक आनन्द प्राप्त होता है कि उसका वर्णन वाणी (शब्दों) में नहीं हो सकता। अर्थात् धर्म ध्यान से पुण्य कर्मों का आगमन, पाप कर्मों का निरोध, संचित कर्मों का क्षय तथा अखंड सुख की प्राप्ति होती है। वस्तुतः, चिन्तन (स्वाध्याय) और ध्यान (परि निर्वाण) ही मोक्ष तक ले जाने वाला है।

चरण तली ना छूटत, रंग लाल लिए उज्जल ।
ताए क्यों कहिए आशिक, जो इतथे जाए चल ।। सि0 5/87

जो ब्रह्मात्माऐं! कभी भी किसी भी परिस्थिति में धनी के चरणों से दूर नहीं होती, अर्थात् जग में रहे मुसाफिर जैसे घर उनका निज धाम जी (मूल मिलावे में)

सूरता एकै राखिए, मूल मिलावे मांहिं ।
स्याम स्यामा जी साथ जी, तले भोम बैठे हैं जांहिं ।।सा0 7/3
ए मूल मिलावा अपना, नजर दीजे इत।
पलक न पीछे फेरिए, ज्यों इस्क अंग उपजत ।।सा0 7/40

ब्रह्मसृष्टि को चाहिए संसार से अपनी दृष्टि हटाकर, मूल मिलावे में विराजमान श्री युगल स्वरूप को प्रेम से निहारे है। यहीं धनी के प्रेम को पाने की राह है, जागृति का आसरा है। दोनों चौपाई इसी ओर इंगित कर रही हैं।

इस फानी दुनियां के जीवड़े जो अपनी माया में मस्त हैं, वे ऐसा कदापि नहीं कर पाएंगे ये बल ब्रह्मात्माऐं ही कर पाएंगी।

आदमी छोड वजूद को, ले न सके रूह की चाल ।
दुनियां बंदी हवाए की, मोमिन बंदे नूर जमाल
।।सि0 23/63

जिन परमहंसों (महान आत्माओं) ने युगल स्वरूप तथा परमधाम के पच्चीस पक्षों का दीदार किया है। उन्होंने अपनी समस्त तृष्णाओंको पहले जीत लिया और बदले में पारब्रह्म का विशुद्ध प्रेम–ईमान–इश्क इलम उन महानात्माओंने कर्मकाण्ड की बन्दगी में समय जाया नहीं किया। वरन् अन्धेरी सर्दी–गर्मी–वर्षा की अंधेरी रातों को ध्यान–चितवन के द्वारा प्रकाशित किया है।

ब्रह्मात्माओं की विशेषता है कि मायावी कष्टों से विचलित हुए बिना धाम धनी के चितवन–ध्यान में लगी रहे। श्री जी ने परमधाम की चितवनी ना करने वालों को काफर कहा है। जो अपनी मैं अहंकार का परित्याग करके स्वयं को न्योछावर नहीं कर सकता आध्यत्मिक दृष्टि से महाकायर है।

आग परो तिन कायरों, जो धाम की राह ना लेत ।
सरफा करे जो सिर का, और सकूचे जीव देत
।।कि0 87/1

निर्गुन भेष भले ही न धारण करें, परन्तु निरगुण भोजन, साधारण वेष–भूषा, सादा–व्यवहार, साधारण रूप से सांसारिक रिश्ते–नातें निभाए। कहीं तडक–भडक दादागिरी ना करें। दिखावटी भी नहीं हो जैसे दहेज लेना–देना, अपने को अमीर होने का दिखावा, दूसरों को नीचा दिखाना आदि। हमेशा समाज में भी सेवा भाव, त्याग भावना, सहयोग, सन्तोष, धैर्य का भाव रखें।

रहवे निरगुन होय के, आहर भी निरगुन ।
साफ दिल सुहागिनी, कबहु न दुखावे किन ।।

वाणी का कथन है कि संसार का भोजन तो इन्द्रियों के सुख के लिए है, स्वादिष्ट व्यंजन है। जबकि ब्रह्मात्माओं का आहार परमधाम के पच्चीस पक्ष, धनी का दीदार है। संसारिक दुःख–सुख तो मन के विकल्प हैं, जिन्हें संसार कलेजे से लगाए घूमता हैं।

खाना दीदार इनका, यासो जीवें लेवे स्वांस ।
दोस्ती इन स्वरूप की, तिन से मिटत प्यास
।।सा0 5/80

सुन्दरसाथ जी! युगल स्वरूप का दीदार (दर्शन) ही इनका असली आहार है। श्री राज के दीदार–ध्यान के द्वारा इनके श्वासों परिवहन होता है। जो प्रेम की प्यासी होती है वह बिना दीदार के बुझती नहीं। बिना दीदार एक क्षण भी बीते तो लगे कि ये समय मेरा बरबाद ही गया।

अरवाह आशिक जो अर्श की, ताके हिरदे हक सूरत ।
निमख न न्यारी हो सके, मेहेबूब की मूरत
।।सि0 23/1

सुन्दरसाथ जी, सोते–जागते, खाते–पीते आत्मा के दिल में युगल स्वरूप की छबी अंकित होने लगती हैं। अपने अर्श दिल में आत्मा को अपने प्रियतम का दीदार होने लगता है। धनी के दीदार को लेकर सुन्दरसाथ बड़ा कनफ्यूज (भ्रमित) रहते हैं, इस भ्रम को पाल लिया है कि अगर प्रियतम का दीदार हो भी जाए तो हमारा ये तन छूट जाएगा। ऐसी विचारधारनाओं ने हमें कायर बना दिया है और दिन प्रतिदिन हम आलसी बनते जा रहे हैं– दीदार आतम के नेत्रों से करना है। ऐसे में जीव आतम–जागृती का सहयोगी जरूर बनता है। मानव तन आतम का साधन है। साधन द्वारा ही साध्य को प्राप्त किया जाता है। तन के बिना तो कुछ भी संभव नहीं है।चाहे हम कितने ही धनवान, प्रतिष्ठावान, बड़े पदों पर आसीन हों, अगर परब्रह्म अक्षरातीत युगल स्वरूप का ध्यान नहीं करते, तो हमारा यह जीवन नरक तुल्य ही कहा जाएगा।

जो हक देखे टिक्या रहे, सोई अर्स के तन ।
सोई करे मूल मजकूर, सोई करें बरनन ।।

बन्दगी (साधना–भक्ति) के चार सोपान है– 1.शरियत (कर्मकाण्ड)– शरीर द्वारा किए जाने वाली बन्दगी 2.तरीकत (ज्ञानकाण्ड)– शरीर+इन्दियों द्वारा की जाने वाली बंदगी 3. हकीकत अन्तःकरण+जीव द्वारा और 4.मारफत तो आत्मा की साधना है जिसमें ध्यान द्वारा अपने ध्येय को प्राप्त किया जाता है। इसे रूहानी–आत्मिक भक्ति कहते हैं। हम तो (आसान) सहज मार्ग अपनाते है– परिक्रमा करना, पारायणों का जल्दी–जल्दी पठन–पाठन, फिल्मी तर्जो के भजन। ये नाचना कूदना आदि। ये सब शरियत के अन्तर्गत ही आता है। जब अन्तःकरण की बन्दगी में आ जाते हैं और पूर्ण रूप से अपना लेते हैं तो तरिकत है। और हकीकत में वह आत्म निःसन्देह आठ प्रहर परमधाम के पच्चीस पक्षों में भ्रमण करने लगती है। हकीकत में मारफत का प्रेम (इश्क) मिलने पर अपने प्रियतम का मधुर मिलन होता है– अगर हम नाचे तो ऐसा नाचे– कि चौथी भोम में नाचे आत्मिक रूप से, ये जाहेरी नृत्य से थकान महसूस होगी। पर नौ भोम–दसवीं आकाशी का नजारा तब ही मिलेगा जब ध्यानवस्था में हम धनी से मिलेंगे और आत्मिक रूप से प्रेम की गहराईयों को छूने का प्रयास करेंगे।

जब हक चरन दिल दृढ धरे, तब रूह खड़ी हुई जान ।
हक अंग सब हिरदे आए, तब रूह जागे अंग परवान ।।सि0 4/37

आत्म जागृती के लिए विरह और प्रेम की भट्ठी चाहिए। अगर हमारा हृदय प्रेम से लाबालब भरा है तो इससे निकली प्रेम की रस धारा धनी से मिलाएगी ही। वह सुन्दरसाथ जी से भी अटूट प्रेम करेगी संसार में रहते हुए सभी के दुःख दर्द को अपना ही दुःख दर्द जानेगी। प्रेम अनमोल खजाना है।

इस्क बन्दगी अल्लाह की,सो होत है हजूर ।
फरज बन्दगी जाहेरी, सो लिखी हक से दूर ।।खु0 10/58

कर्म, उपासना की बन्दगी का मार्ग बहिर्मुखी होता है और ज्ञान विज्ञान (हकीकत–मारफत) की बन्दगी का मार्ग अन्तर्मुखी (आत्मिक) होता है। जो ध्यान के द्वारा ही संभव है। परमधाम की रूहें जिस जीव पर बैठकर यह खेल देख रही हैं, उस जीव से भूलें हो रही हैं। पहली बहिस्त में ब्रह्मात्मायों के जीवों को आत्मा की नकल के रूप में अखण्ड किए जाना है, वहीं हमारी हांसी का सामान भी इकट्ठा हो रहा है। ये सब हमें हमारी (चिप) चलचित्र की भांति दिखाया जाएगा। बुरे कर्म किए जीवों ने, परन्तु शर्मिंदगी आत्माओं को उठानी पड़ेगी। इसलिए हम हंसी के पात्र न बने। हमें अपनी भूलों को अभी सुधारना है। हमें प्रेम बन्दगी और प्रेममयी ध्यान का रास्ता अपनाना है।

पांव तले पड़ी रहे, याको इतही खान पान ।
एही दीदार दोस्ती कायम, जो होवे अरवा अर्श सुभान ।।सा0 5/88

।। प्रणाम जी ।।

आवश्यक सूचना

सुन्दरसाथ के चरणों में विनम्र प्रार्थना है कि जो भी सुन्दरसाथ लिखने में कुशल,योग्य है। जो अपना भाव तारतम वाणी और शास्त्रों के माध्यम से दूसरों तक पहुंचाना चाहते हैं ऐसे सुन्दरसाथ अपना लेख ईमेल (E-mail) या वटसप (watsapp) के माध्यम से ज्ञानपीठ में भेजें। लेख भेजने की अन्तिम तीथि प्रत्येक महिने की 1 तारिख तक रहेगी। समय पर भेजे गये लेखों को ही उस महिने की पत्रिका में प्रकाशित किया जायेगा।अन्यथा आगे आनेवाली महिनों में प्रकाशित की जायेगी।

लेख भेजने का नियम–
1–शुद्ध टाईप होनी चाहिए।
2–हस्तलिखित शुद्ध एवं स्पष्ट होना चाहिए।
3–टाईप किया गया लेख हो तो ओरजिनल कांपी होनी चाहिए।
4–डाक से ज्ञानपीठ के पते भर भेज सकते हैं।
5–हस्तलिखित लेख को PDF बनाकर ही भेजें, ताकि पढने में और टाईपिंग में असुविधा न हो।

तारतम मंजरी मासिक पत्रिका "लेख" प्रेषित हेतु एवं अन्य कोई भी असुविधा के लियें निम्नलिखित EMAIL और दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें।

tertammanjari@gmail-com

+9193141 93262 (जूनेजा बाबूजी)
+919725389547 (आचार्य सुभाष जी)

सखी री जान बूझ क्यों खोइए, ऐसा अलेखे सुख अखण्ड

जै किशन निजानंदी, बोकाजान (आसाम)

प्यारे सुन्दरसाथ जी! अखंड सुख की प्राप्ति हेतु ऋशि–मनीशी ने युगों–युगों से भक्ति, तप, तपस्या, ध्यान–साधना करते आए हैं। किन्तु तारतम ज्ञान के अभाव में उन्हें अखंड सुख का स्वाद भी चखने को नहीं मिला। मात्र अक्षर ब्रह्म की पंच वासनाओं ने ही बेहद के अखंड सुखों की थोड़ी सुगन्ध पायी है। जब ऋशि–मुनि, देवी–देवताओं और पंच वासनओं का यह हाल है, तो संसार के साधारण मनुश्यों के बारे में कहना ही क्या?

आज संसार का प्रत्येक मानव सुखी होना चाहता है और इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु वह एड़ी से चोटी तक का बल लगा देता है। बचपन गुजर जाता है, जवानी गुजर जाती है और अंततः वृद्धावस्था आ जाती है। सुख की चाहना में दुःख रूपी मरन सेज्या पर लेटे हुए त्राहि माम् की रट लगा रहा होता है, परन्तु सुख की प्राप्ति उन्हें नहीं होती। वास्तव में देखा जाए तो इस माया रूपी संसार में सुख है ही नहीं। इस संसार में अल्प समय के लिए मायावी क्षणिक सुख अवश्य मिलता है, परन्तु तव भी अंततः दुःख के कारण ही सिद्ध होता है। इसलिए इस मायावी संसार मे चाहे राजा हो या प्रजा, कोई भी कहीं भी सुखी नहीं है। इस विशय के सम्बन्ध में किसी ज्ञानिजन ने कितना सत्य कहा है–

दान बिना निर्धन दुखी, तृश्णा वश धनवान ।
कही न सुख संसार में, जो सब जग देखों छान ।।

तारतम ज्ञान के नजर से देखे तो यह संसार असत्–जड़–दुःख के सिवाय और कुछ नहीं है। अखंड सुख तो मात्र परमधाम में ही है। जहां सत्–चिद्–आनन्द के सिवाय दुःख का नामो–निसान नहीं है। इस अखंड परमधाम में हम सभी आत्माएँ सदा प्रेम–आनन्द के अखंड सुख के सागर मे झीलना करते थे, किन्तु अखंड सुख का लज्जत क्या होता है, यह हमें पता नहीं था। इसलिए हमने अपने प्राण–प्रियतम श्री राज जी से यह दुःख रूपी खेल मांगा ताकि हमें परमधाम के अखंड सुख का लज्जत इस झूठे संसार में मिल सके।

सेहेजल सुख तुममें है सदा, अलप नहीं असुख ।
तुम सुख का स्वाद लेने, खेल मांग्या दुःख ।।
क. हि. 16/50

श्री राज जी ने भी अपनी आत्माओं को अपने अखंड सुख के लज्जत दिलाने के लिए अपने हुकम से इस मायावी झूठी दुनियां की रचना कीए और अपनी आत्माओं को सुरता के द्वारा इस झूठे संसार में भेज दिया। श्री राज जी ने अपनी आत्माओं को इस झूठे संसार में भेजने से पहले उन्हें सावचेत

करते हुए कहा था कि हे आत्माओं! तुम जिस दुःख रूपी खेल देखने हेतु आज बहुत उतावली हो रही हो, वह ऐसा मायावी तिलस्मी दुनियाँ है, जिसे देखने मात्र से ही तुम सब फरामोशी के बंधन में आ जाओगी। अर्थात् तुम अपना सब कुछ भूल जाओगी। मैं अपने बेसक इलम द्वारा तुम्हारी खोई हुई स्मृतियों को वापस याद दिलाऊंगा, किन्तु तुम्हारे ऊपर माया का अमल (नशा) इतना अधिक होगा कि तुम मेरी बात (इलम) को सुनोगी ही नहीं। सुनोगी भी तो उसे सिरे से नकार दोगी। तारतम ज्ञान के आत्मसात् न करने के कारण तुम्हारी आत्मा माया की फरामोशी में पड़ी रहेगी। अर्थात् वह जागृत नहीं हो पाएगी।

पर ऐसा देखोगे तिलसम, जो सबे हुई फरामोस ।
इलम देऊं मेरा बेसक, तो भी ना आओं माहें होस
।।खि. 20/19

सुन्दरसाथ जी! आज हमारी स्थिति भी यही है। हमारे पास बेसक इलम है और देखा जाए तो हम ज्ञान दृश्टि से जागृत भी हो चुके हैं। हद–बेहद–परमधाम का सारा प्राथक्य हमें पता है। फिर भी हम इस संसार के झूठे सुखों के मोह में पड़ करके अपने परमधाम के अखंड सुख, जो शब्दों से परे हैं, उसे हम जान बूझ कर गवां रहे है।

सखी री जान बूझ क्यों खोइए, ऐसा अलेखे सुख अखंड ।
सो जाग देख क्यों भूलिए, बदले सुख ब्रह्मांड ।।कि. 78/1

ये कैसी बिडम्बना है? ये कैसा माया का फांस है?जो तारतम ज्ञान के द्वारा जागृत होने पर भी अपने अखंड सुख को छोड़कर, माया के झूठे सुखों के पीछे हम दौड़ लगा रहे हैं। एक तरफ धनी हमें माया के दुःखों से निजात दिलाने हेतु अपन2 वाणी के द्वारा परमधाम के अखंड सुखों का याद दिलाने में लगे हैं, तो दूसरी तरफ हम धनी को पीठ दिए हैं। धनी के प्रेममयी राह को छोड़ कर इस पिशाचनी माया के पीछे अपनी आँखे मूँद कर भाग रहे हैं। इस पिशाचनी माया ने आज तक सभी के सुख–चैन, प्रेम–विश्वास, भक्ति–शक्ति इत्यादि सब कुछ छीना ही है। किसी को आज तक कुछ नहीं दिया। लेकिन हम सुन्दरसाथ को लगता है कि अबकी बार यह माया हमें सब कुछ दे देगी। इसलिए तो हम धनी को छोड़ कर, अपने अखंड सुख को छोड़ कर इस माया के पीछे ही भागे जा रहे हैं। भागिये सुन्दरसाथ जी इस माया के पीछे कितना भागना है भागिये। इस माया के पास असत्–जड़–दुःख जो कुछ भी है, वह सब आपको एक दिन अवश्य दे देगी। उस दिन आप दुःख भरे मन से माया का यह गीत अवश्य गाइएगा–हाय–हाए, तौबा–तौबा, तौबा–तौबा, हाय–हाय.....। किन्तु यह भी याद रखिएगा कि उस दिन इस गीत को सुनने वाला कोई नहीं होगा, खुद माया भी नहीं होगी।

जागियां तो भी खेल न छोड़े, फेर फेर दुःख को दौड़ ।
धनी याद देत घर को सुख, तो भी छूटे ना लग्यों जो विमुख ।।पिर. 3/189

इस माया की काली छाँव तले जो भी सुख की आशा लेकर गया है, उसे दुःख के सिवाय और

कुछ नहीं मिला। शाश्वत सुख तो मात्र राज जी के चरणों तले हैं, अखंड परमधाम में हैं। लेकिन हमारा मन इस माया की झूठी तृश्णा में फँसे होने के कारण वह परमधाम में, राज–श्यामा जी के शोभा–श्रृंगार में रमना ही नहीं चाहता है। उसे (हमारे मन को) अखंड सुख की प्यास तो है, किन्तु अमीरस को छोड़ कर वह माया के मृग–तृश्णा से अपना प्यास बुझाना चाहता है, जो कदापि सम्भव नहीं। आज हमें परमधाम के अखंड सुख को पाने का जो शुभ अवसर मिला है, उसे हम दुनी के बदले गवाते जा रहे हैं। हमारे पास अनमोल हीरा तो है, किन्तु उसका मोल हमें पता न होने के कारण उसे माया के तुच्छ कौड़ी से बदलते जा रहे हैं। यही भूल एक दिन हमें गुनाहगारों की कतार में खड़ा कर देगा।

दुनी बदले दीन को खोवहीं, चले सो उलटी रीत ।
सुपने के सुख कारने, लोभे किए फजीत ।।

आज हमारी स्थिति ऐसी हो गयी है कि दुःख रूपी विश का पान करते–करते हमें माया की ऐसी लत लग गई है कि अपने मूल–मिलाव, खिलवत–खाना जो रूहों का असल ठिकाना है, उसका स्वाद लेना ही भूल गये हैं। जो कभी प्रेम रूपी अमृत सागर में गोता लगाया करती थी, वह आज विश रूपी सागर में गोता लगा रही है। क्या यही परमधाम की ब्रह्मसृश्टियों का लक्षण है, जो दोजक के झूठे सुख के स्वाद में अपने अर्स सुख के लज्जत को ही भूल जाए?

ए मूल मिलावा खिलवत का, अंजु न आवे याद ।
ए झूठी जिमी जो दोजख, इत कहां लग्यों तो हें स्वाद ।। कि.

जरा सोचिए साथ जी! यदि हम बेसक इलम पाकर भी माया के सुख के कारण अपने अखंड सुख को भूल जाएं, अपने परमधाम को भूल जाएं, तो भला अपने प्राण–प्रियतम श्री राज जी को रिझायेंगे कैसे?परमधाम के अखंड सुख का स्वाद लेंगे कैसे? यदि सारा जीवन हम राज जी को पीठ देकर माया के तृश्णा में ही फँसे रहेंगे तो परमधाम जा के राज जी से क्या हम अपनी नजर मिला पायेंगे?

जान बूझ के भूलिए, इलम पाए बेसक ।
देखों दिल विचार के, क्यों राजी करोगे हक ।।छो. क. 11/103

आज हम माया के फरामोशी की कारण अपने मूल घर परमधाम के अखंड सुखों को छोड़कर इस झूठी पापिनी माया के जाल में फँसते चले जा रहे है। यही कारण है कि धनी का इश्क हमारे हृदय में नहीं आ रहा है। माया जनित हृदय में भला धनी का इश्क कैसे आएगा?माया की तृश्णा में ही फँसे रहेंगे तो परमधाम जा के राज जी से क्या हम अपनी नजर मिला पायेंगे?

अखंड सुख छोड़या अपना, जो मेरा मूल मुकाम ।
इश्क न आया धनीय का, जाए लगी हराम ।।कि. 99/5

यदि कोई हराम का साथ ना छोड़े तो इसमें धनी का क्या दोश?धाम धनी ने तो अपनी वाणी के द्वारा उस परमधाम की पहचान करायी है, जहां मूल मिलावे में युगल स्वरूप श्री राज जी श्यामा जी और हम सभी सुन्दरसाथ विराजमान हैं। जहाँ आनन्द ही आनन्द, प्रेम ही प्रेम है। ऐसे अखंड सुखमयी

परमधाम को पीठ देकर यदि हम मायावी सुखों की तृश्णा में ही फँसे रहेंगे तो हमें अखंड सुख आराम की प्राप्ति कैसे होगी?

मूल वतन धनिएँ बताइयां, जित साथ स्यामा जी स्याम ।
पीठ दई इन घर को, खोया अखंड आराम ।।कि. 99/2

आज इस के ब्रह्मांड में धाम धनी श्री राज जी ने तो परमधाम का सम्पूर्ण खजाना (आत्मिक धन) ही हमें खोल कर दे दिया है, यहाँ तक कि अपने दिल का सारा भेद खोल कर आठों सागरों के अमीरस को हमारे ह्रदय में वाणी के द्वारा उड़ेल दिया है, लेकिन हाय रे मेरी किस्मत! हम उस रस (आनंद) को चितवनी के द्वारा आत्मसात् नहीं कर पा रहे हैं। हमारा ईमान भी तो रेत की उस ढ़र की तरह है, जो माया के एक झोंके से बिखर जाता है। पूर्ण ईमान न होने के कारण ही माया अपने बल दिखाकर, हमें धनी के मार्ग से दूर कर देती है और हम अखंड सुख का लज्जत चख नहीं पाते हैं।

खोल खजाना धनिएं सब दिया, अंग मेरे पूरा न ईमान ।
सो ए खोया मैं नींद में, करके संग सैतान ।।कि. 99/6

सुन्दरसाथ जी! आज हमारे पास यही वह सुनहरा अवसर है, जिसमें श्री अक्षरातीत के अखंड सुखों की लज्जत पायी जा सकती है। हम सब सुन्दरसाथ का नैतिक कर्त्तव्य है कि अक्षरातीत श्री राज जी जो सुख हमें देना चाह रहे हैं, उसकी प्राप्ति के राह में हम दौड़ लगाएं। यदि सुन्दरसाथ की जमात और तारतम वाणी को पाकर भी हम आत्मिक धन की प्राप्ति की ओर अग्रसर नहीं होते हैं और मात्र मायावी सुखों की इच्छा को ही पाले रहेंगे तो फिर हम में (ब्रह्मसृश्टि में) और संसारिक लोग (जीव सृश्टि) में फर्क ही कहां रह जाएगा?जीव सृश्टि की करनी और हमारी रहनी में अन्तर ही क्या रह जाएगा। सुन्दरसाथ जी! जब हम जीव सृश्टि की करनी छोड़कर परमधाम की प्रेममयी रहनी को अपनायेंगे तभी जाकर हमें आत्मिक सुख और आत्मिक आनंद मिलेगा।

सुख अखंड अछरातीत को, इन समें पाइयत है इत ।
कहां कछूं कुकर तिनके, जो माहें रेहे के खोवत ।।कि. 78/6

सुन्दरसाथ जी! परमधाम के एक पल के दीदार में इतना आनंद प्राप्त होता है कि उसके सामने करोड़ों बैकुंठ के राज्य भी कहीं नहीं ठहरते। जरा सोचिए जिस एक पल के सुख के सामने करोड़ों बैकुंठ का सुख भी फीका पड़ जाता है, तो फिर इस मायावी संसार में झूठे सुख कहां ठहरेंगे? इतना सुब कुछ जान कर भी हम अपना अमूल्य समय का एक–एक पल धनी की याद में, धनी के प्रेम में बिताने के बजाए, माया की व्यर्थ चाहनाओं में गवाते हैं तो यह समझदारी नहीं साथ जी! सबसे बड़ी नादानी होगी।

कई कोट राज बैकुंठ के, न आवे इत के खिन समान ।
सो जनम वृथा जात है, कोई चेतो सुबुध सुजान ।।कि. 78/2

हमारी समझदारी तो इसी में हैं कि हम अपनी नजर को माया से हटाकर परमधाम में लगाएं। जहां हमारी आत्माओं का असल आनंद छिपा हुआ है। हम चितवनी के द्वारा अपनी आत्म चक्षु से श्री राज श्यामा जी के अखंड स्वरूप को देखें, जिसमें अनेक प्रकार के आनंद और सुख छिपे हुए हैं। उनके अखंड स्वरूप में आह्लाल उत्पन्न करने वाली अनेकों प्रकार की विशेशताएँ छिपी हुई हैं, जो आठों पहर आत्म के दिल से अलग नहीं हो पाती। वह (आत्मा) पल–पल आठों जाम युगल स्वरूप के दीदार रूपी आनंद रस में डूबी रहती है। ऐसा अखंड सुख और आनंद हमारे युगल स्वरूप के शोभा–श्रृंगार में है, परमधाम के पचीस पक्षों की लीला और शोभा में है।

सत सुख कई सरूप में, कई आनंद आराम ।
कई खुासाली खूबियां, अंग छूटे न आठों जाम ।।सि. 1/12

सुन्दरसाथ जी! माया के प्रभाव के कारण हमारी आत्मा भले ही आज अपनी परमधाम के अखंड सुख से बंचित है। किन्तु जिस दिन उसे (आत्मा को) जरा सा भी अखंड सुख की लज्जत मिल जाएगी, उस दिन वह माया की सारी तृश्णाओं को छोड़कर ब्रह्मानंद के अखंड सुखों के रस में डूबने के लिए तत्पर हो जाएगी। लेकिन यह तब ही सम्भव होगा जब हम अपना एक पल भी व्यर्थ में न गवाएं। अपना एक–एक पल ब्रह्मवाणी के मनन में और श्री राज जी के चिन्तन (चितवनी) में बिताएं। धाम धनी की इच्छा के अनुसार अपना आचरण करें और सेवा कार्य इत्यादि में किसी भी प्रकार से भूल ना होने दें। प्रेममयी चितवनी का राह अपना कर, अपने धाम दिल में युगल स्वरूप के शोभा–श्रृंगार बसाकर अपने प्राण–प्रियतम को रिझा लें। यदि ऐसा करने में हम सफल हो जाते हैं तो निश्चय हमारा हृदय राज जी के प्रेम और आनंद से भर जाएगा। और हमारा इस संसार में आना भी सफल हो जाएगा। हम इत (संसार में) भी और उत (परमधाम में) भी धंन–धंन हो जायेंगे–

एक साइत वृथा न गई, धनी किए सनकूल ।
चले चित्त पर होए आधीन, परी ना कबहूं भूल ।।
सो इत भी होए चले धंन धंन, धाम धनी कहे धंन धंन ।
साथ में भी धंन धंन हुइयां, याके धंन धंन हुए रात दिन ।।कि. 78/9,10

।। प्रणाम जी ।।

ज्ञानपीठ सुविचार

जीवन में जो आनंद वैराग्य का है वह किसी और साधन से प्राप्त नहीं हो सकता।
वैराग्य घर बार त्यागने का नाम नहीं है अपितु मोह रहित होकर,
जीवन जीने के लिये पर्याप्त साधनों का त्याग पूर्वक भोग करना है।

सैयां हम धाम चले

बब्बू, अबोहर

सैयां हम धाम चले, तुम हुजो सबै हुसियार ।।
एक खिन की विलम न कीजियो, जाए घरो
कीजे करार ।।

सुन्दरसाथ जी यह चौपाई किरंतन ग्रन्थ में है। किरंतन ग्रन्थ का प्रकटन काल वि. सं. 1712–1715 तक है। वि. सं. 1748 में मारफत सागर ग्रन्थ के अवतरण के पश्चात भी किरंतन ग्रन्थ के छुटमुट प्रकरण उतरते रहे, जो धाम चलते चितवनी से सम्बन्धित हैं।

इस प्रकरण में श्री इन्द्रावती जी के धाम हृदय में विराजमान होकर खुद धाम धनी कहलवा रहे हैं कि ''सैयां हम धाम चले'' तो सुन्दरसाथ जी किससे धाम चलने की बात कही जा रही है। क्योंकि वाणी तो कहती है ''जागासी भेले, पौढ़सी भेले'' यहाँ इसका तात्पर्य यह है कि परमधाम में तो जागनी एक साथ ही होगी। वहां पर कोई आगे पीछे नहीं जाएगा।

तो फिर कौन से धाम चलने की बात की जा रही है। कई सुन्दरसाथ इसे तन छोड़ने के साथ घटा देते हैं। सुन्दरसाथ जी इसमें चितवनी के द्वारा धाम चलने का प्रसंग है। इससे पहले वाणी उतरती रही। फिर पिछले चार साल 1748–1751 श्री जी ने पन्ना जी की गुम्मट में ध्यान लगाया और सब सुन्दरसाथ से ध्यान करवाया। तो प्रश्न यह होता है कि जब महामति जी के धाम हृदय में साक्षत धाम घनी विराजमान हैं, तो उन्हें ध्यान करने की आवश्यकता क्यों पड़ी?क्योंकि वाणी में कहा है। ''नाम सिनगार सोभा सारी, मैं भेख तुम्हारो लियो।''

तो फिर उस तन से चितवनी क्यों?यह सब हमारे लिए सिखापन है कि चाहे आप जितना मर्जी पूजे जाओ, चाहे जितनी सेवा कर लो, वाणी चिन्तन कर लो, परन्तु चितवनी तो इन सब में सर्वोपरि है। नहीं तो महामति जी के धाम हृदय में तो धनी 1722 से ही विराजमान थे। जब सब सुन्दरसाथ घर–बार छोड़कर धनी के साथ चले और पन्ना जी में पहुंचे तो, वहां साक्षात् श्री जी के स्वरूप में जिसकी जो भावना होती थी, धनी उन्हें दीदार देते थे। जिन जैसा चीन्हा मुहम्मद को, तिन तैसी पाई चिन्हार। लेकिन फिर भी उन सुन्दरसाथ से चितवनी करवाई जा रही है, ताकि आने वाला सुन्दरसाथ भटक न जाए।

कई सुन्दरसाथ कहते हैं कि चितवनी की क्या आवश्यकता है? हम तो चलते फिरते ध्यान कर लेते हैं। लेकिन साथ जी अगर हम बीतक साहब देखें तो जब धनी श्री देवचद्र जी भोग लगाते लगाते

ध्यान में चले जाते हैं और वहां श्री कृश्ण जी को राधा रानी के रूप मे घुंघनी का प्रसाद खिलाते हैं और खिलाने के लिए जैसे ही वो अपना हाथ उठाते हैं तो उनका हाथ जमीन से टकरा जाता है और हाथ टकराने से उनका ध्यान टूट जाता है। तो इससे तो यही सिखापन मिलती है कि जब श्री धनी देवचन्द्र जी का हाथ हिलने से ध्यान टूट गया तो हम चलते फिरते ध्यान कैसे कर सकते हैं?हां, हमेशा धनी के भावों में डूबे रहना ध्यान नहीं, भावलीनता होती है।

कई सुन्दरसाथ का यह मानना है कि हम ध्यान इसलिए नहीं करते कि हमें डर है कि कहीं राज जी हमारे सामने आऐंगे तो हमारा तन छूट जाएगा। किन्तु सुन्दरसाथ जी यक भी एक भ्रान्ति है। वाणी में कहा है–

जो हक देखे टिक्या रहे, सोई अर्स के तन ।
सोई करे मूल मजकूर, सोई करे बरनन ।।

और अगर धनी सामने हो और हमारा तन छूट भी जाए तो भी सौदा महंगा नहीं है। हमसे अच्छे तो जीव सृश्टि वाले हैं, जो गाते हैं ''दाता मेरे जीवन की बस एक तमन्ना है, तुम सामने हो मेरा दम ही निकल जाए।''किसके लिए गा रहे हैं?आदि नारायण के लिए या विश्णु के लिए। वो तो उन्हीं के अंश हैं ना। और हम तो अपने आपको ब्रह्मसृश्टि कहते हैं और तन छूटने से भी डर रहे हैं। हमें तो यह जीव सृश्टि चिड़ा रही है कि तुमसे अच्छे तो हम हैं जो अपने मासूक पर तन कुरबान करने से नहीं डरते।

आगूं आसिक ऐसे कहे, जो माया थें उतपन ।
कोट बेर मासूक पर, उड़ाए देवे अपना तन ।।

जब पुन्नु की मौत हो जाती है तो ससी सबसे कहती फिरती है कि कोई एक बार मेरे पुन्नु का खबर लाकर दे दें, चाहे वो झूठ ही बोल दे कि ससी तेरा पुन्नु जिंदा है तो मैं अपना सिर अनेक बार काटकर उसे दे दूं। और सुन्दरसाथ जी हम तो परमधाम के रहने वाले हैं और दावे भी बड़े–बड़े करते हैं। लेकिन कुरबानी का नाम सुनते ही घबरा जाते हैं। कई सुन्दरसाथ तो कहते हैं कि जैसे बड़े महाराज जी ने सरकार श्री को दर्शन करवा दिए थे, हमें भी वैसे ही हो जाऐंगे तो सुन्दरसाथ जी सरकार श्री की कुरबानी देखिए। दिन रात सेवा न शरीर की चिंता, न दिन–रात की। बस दिल में एक ही चाहत है कि मैं अपने सुन्दरसाथ की सेवा कैसे करूं?उन्हें अपने तन की भी सुध नहीं है। पाँव मे छाले पड़े हैं। फिर कहीं जाकर बड़े महाराज जी ने उन्हें दर्शन करवाए।

क्या हमारे अंदर वो सेवा भावना है और अगर ऐसा हो भी जाए तो समाज भटक जाएगा। हमारी आनी वाली पीढ़ियाँ निठल्ली हो जाएंगी। वो इंतजार करेंगी कि कब कौन सा तन आए और हमें राज जी और परमधाम का साक्षातकार करवाए।

तो सुन्दरसाथ जी यह सब हमारे लिए है कि महामति जी खुद इस रास्ते पर चलकर दिखा रही हैं। उन्हें तो पता था आने वाला समय कैसा आएगा। आज हर धर्म में ध्यान की महत्ता गाई जा रही है, चाहे वो राधा स्वामी मत हो, चाहे ब्रह्मकुमारी

मत हो या अन्य कोई भी। वो 2:30, 2:30 घंटे ध्यान पर जोर दे रहे हैं और आज हमारा समाज ध्यान से हटता जा रहा है और कर्मकाण्ड की दीवारों से अपना सिर फोड़ रहा है।

महामति जी तो कह रहे हैं कि ''सैंया हम धाम चले, तुम हुजो सबे हुसियार। एक खिन की विलम न कीजिए, जाए घरो करे करार।।'' तो इसमें महामति जी किस करार की बात कर रहे हैं। मासूक सेज न आइया, तो निरफल गई जो रात।'' हो मेरी वासना तुम चलो अगम के पार, अगम पार अपार पार, वहाँ है तेरा करार।''

तो सुन्दरसाथ जी हमारा करार चैन माया में तो नहीं है। हमारा करार तो परमधाम में है, श्री राज जी के दीदार में है। इतने सुन्दर, सलोने राज जी को छोड़कर, 25 पक्षों को छोड़कर हमने अपना ध्यान कहाँ लगा रखा है?इस झूठी माया में जो सबको अपने फंदे में डाले बैठी है। याद करो अपने घर के सुखों को, धाम धनी से मिलने वाले इश्क को तो यह छलनी माया हमसे अपने आप छूट जाएगी। हम अपने घर के अखंड सुखों को छोड़कर कहाँ इस गंदगी मं सुखों की कामना कर रहे हैं। यहाँ पर अगर सुख हैं भी तो क्षणिक सुख हैं। अपने अखंड सुखों को याद करो कि कैसे हम अपने पिया के साथ सुखपालों के सुख लेते थे, कैसे माणिक पहाड़ के सुख लेते थे, जमुना जी के सुख, सातों घाटों के सुख। वहां तो सुख ही सुख हैं, आनन्द ही आनन्द है। तो इन सुखों को लेने के लिए ही महामति जी इस चौपाई के माध्यम से हमें कह रही हैं कि मैं तो अब ध्यान द्वारा परमधाम जा रही हूं, तुम सब भी सावचेत हो जाओ और एक पल की भी देर किए बिना ध्यान में डूब जाओ, क्योंकि वहीं परमधाम में ही हमारे निजसुख है।

तो सुन्दरसाथ जी सरकार जी भी कहा करते थे कि ''सेवा, रहेनी और चितवनी का कोई विकल्प नहीं है।'' और वाणी भी हमें सिखा रही है–

अब हम रहयो न जावहीं, मूल मिलावे बिन ।
हिरदे चढ़ चढ़ आवहीं, संसार लगत है अगिन ।।

और हमें हमारे परम पूज्य श्री राजन स्वामी जी भी बार–बार प्रेरित कर रहे हैं कि ध्यान करो, ध्यान करो। बार–बार ध्यान के शिविर लगाए जा रहे हैं कि किसी भी तरह सुन्दरसाथ की आत्मा जागृत हो जाए और वो खुद हमें इस रास्ते पर चलकर दिखा रहे हैं। वो कितने कितने घंटे चितवनी करते हैं। साथ जी तो क्या हमारा कोई कर्त्तव्य नहीं है? राज जी हमसे और कुछ नहीं मांगते न भोग, न रूमाल न कोई और चीज। वो हमसे हमारा कुछ समय मांगते है कि जब तुम आँखे बंद करके बैठो तो कुछ पल संसार को भूल जाओ, खुद को भूल जाओ। तब सिर्फ मुझे याद करो, मुझे दिन में बसा लो। आखिर में सुन्दरसाथ जी यही कहूंगी कि–

सुरता एकै राखिए, मूल मिलावे मांहें ।
स्याम स्यामा जी साथ जी, तले भोम बैठे हैं जाहें ।।

।। प्रणाम जी ।।

माधुर्यता का महत्त्व एवं रहस्य

ज्योति, सरसावा

प्राणाधार, आत्म सम्बन्धी सुन्दरसाथ जी! आज हम विचार करेंगे माधुर्यता अर्थात् वचनों में मिठास कितनी आवश्यक है और वचनों में मिठास तभी आएगी जब हमारे दिल में भी माधुर्यता भरी होगी। तुलसी दास जी ने मीठे वचनों को एक वशीकरण मंत्र कहा है। मीठी बोली के द्वारा किसी को भी वश में किया जा सकता है। जो काम हमारा नहीं हो पा रहा, मीठी बोली से वह कार्य भी पूर्ण हो जाता है।

तुलसी मीठे वचन से, सुख उपजत चहुँ ओर ।
वशीकरण यह मंत्र है, तजि दे वचन कठोर ।।

मीठी बोली से एक ब्राह्मण एक राक्षस को भी वश में कर लेता है। एक बार एक ब्राह्मण एक निर्जन वन में घूम रहा था उसी समय एक राक्षस ने उसे खाने की इच्छा से पकड़ लिया। ब्राह्मण बुद्धिमान तो था ही विद्वान भी था, इसलिए न तो वह घबराया और न ही दुःखी हुआ। उसने साम का प्रयोग किया। उसने उसकी प्रशंसा बड़े ही मधुर शब्दों में प्रारम्भ कर दी। राक्षस, तुम दुबले क्यों हो?मालूम होता है तुम गुणवान, विद्वान हो और अयोग्य व्यक्तियों को सम्मानित होते हुए देखकर तुम्हें गुस्सा आता होगा। तुम तो बहुत ही बुद्धिमान हो, अज्ञानी लोग तुम्हारी हँसी उडाते होंगे इसलिए तुम उदास भी हो, दुर्बल भी। उस ब्राह्मण का उस राक्षस से बात करने का तरीका इतना मधुर था, उसकी वाणी की माधुर्यता के कारण राक्षस ने उसे अपना मित्र बना लिया और बहुत सारा धन देकर विदा किया। इसी प्रकार कबीर दास जी कहते हैं–

ऐसी वाणी बोलिये, मन का आपा खोय ।
औरन को शीतल करे, आपहुं शीतल होय ।।

हमे ऐसी मीठी वाणी बोलनी चाहिए जिससे अपना मन भी शीतल रहे और सुनने वाले को भी शीतलता का आभास हो।

मधुर वचन है औषधी, कटु वचन है तीर ।
श्रवण द्वारा हवै संचरै, साले सकल शरीर ।।

जैसे मधुर वचन वशीकरण का काम करते हैं, मीठे वचन औषधि का भी काम करते हैं। कोई भी व्यक्ति किसी परेशानी में है या दुःखी है तो अगर हम उससे दो वचन मीठे बोल लेते हैं तो उसे सान्तवना मिलती है। उसका दुःख कुछ कम हो जाता है। जबकि कड़वे वचनों को तीर के समान

कहा गया है जो कानों के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर दुःख पहुँचाते हैं।

वेद का कथन है कि मैं मधु के समान मीठी वाणी बोलूं और मेरा हृदय भी मधु के समान मधुर हो जाए। अथर्ववेद में कहा गया है–

वाचा वदामि मधुमत् भूयासम में मधु सदृशः
मधुमती वाचमुदेयम् ।

मीठी वाणी के महत्त्व को जानने के पश्चात् इस मिठास के रहस्य को एक प्रसंग के माध्यम से जानने का प्रयास करते हैं।

अकबर के दरबार में एक गवैया था। जिसे तानसेन कहते हैं जब वह मल्हार गाता था तो वर्षा होने लगती, जब वह दीपक राग गाना आरम्भ करता तो दीये जल जाते। एक दिन अकबर ने कहा तानसेन! यह सब कुछ तुमने जिससे सीखा है उनका गाना हमें भी सुनाओ।

तानसेन ने कहा, 'बादशाह मेरे गुरू स्वामी हरिदास है। आपके दरबार में वे नहीं आयेंगे। मेरी तरह उन्हें आपसे कुछ लेना देना नहीं है। वे जंगल में रहते हैं, पत्तों की झोपड़ी बनाकर जब मौज आ जाए, दुतारा लेकर गाने लगते हैं। किसी के लिए वे गाते नहीं।

अकबर ने कहा वह नहीं आ सकते, तो चलो हम उनके पास चलते हैं। एक बार उनके दर्शन तो कर लें। बादशाह को साथ लेकर तानसेन उस जंगल में गए जहाँ हरिदास स्वामी रहते थे, देखा हरिदास जी कुटिया में ध्यान मग्न बैठे हुए हैं। अकबर ने कहा तानसेन क्या यहाँ आकर भी प्यासे ही रहेंगे?कोई उपाय नहीं जो हरिदास जी गाने लगे।

तानसेन ने कहा मैं उपाय करता हूँ। आप चुप खड़े रहिए उसने सितार उठाकर बजाना शुरू कर दिया। पहले तो ठीक बजाया फिर जान बूझकर गलत बजा दिया। हरिदास जी ने सुना तो बोले– गलत बजाते हो तानसेन सुनो! और अपना दुतारा उठाकर बजाने लगे साथ–साथ गाने लगे। जंगल क्या सारा आकाश झूम उठा। वृक्ष और पौंधे झूम उठे, पक्षी शान्त हो गए ऐसा लगा जैसे हवा ही ठहर गई हो। बादशाह भी मस्त हो गए, समय का पता ही नहीं लगा। रास्ते भर बादशाह कुछ बोल नहीं सके। मधुर संगीत की ध्वनि कानों में गूँज रही थी। उस समय बादशाह ने तानसेन से कहा ''तुम अच्छा गाते हो, भारतवर्ष के सबसे बड़े गायक हो फिर भी तुम्हारे गाने में वह रस क्यों नहीं, वह मस्ती क्यों नहीं, जो स्वामी हरिदास जी के गाने में है।

तानसेन बोला– मुझमें और उनमें बहुत बड़ा अन्तर है। मैं शाही गवैया हूँ, आपके लिए गाता हूँ। हरिदास जी जगत्पति के गायक हैं। वे बड़े दरबार के गायक हैं। मैं छोटे दरबार का गायक हूँ। जो भी परमात्मा के गुण गाता है, उसकी वाणी में रस होगा ही।

सुन्दरसाथ जी! वाणी ही महानता का

परिचय देती है। जो व्यक्ति जितना ही महान होता है। उसकी वाणी भी उतनी ही शिष्ट, शालीन और सत्य तथा मधुरता से भरपूर होती है।

जाकौ नामै रसना, होसी कैसी मीठी हक ।
जिनकी जैसी बुजरकी, जुबां होत है तिन
माफक ।।

पूर्ण ब्रह्म परमात्मा, अक्षरातीत, धाम धनी जिनकी जिह्वा को रसना कहा गया है अर्थात् जिससे हर समय रस की ही अनुभूति होती हो उसमें कितनी मिठास होगी। और हो भी क्यों न जिनकी जैसी बुजरकी होती हैं उनकी जुबान भी वैसी ही होती है। अक्षरातीत से अधिक मीठा बोलने वाला इस संसार में या कहीं भी कोई भी नहीं है। अक्षरातीत को अपने हृदय सिंहासन पर विराजमान करने के लिए अपने हृदय को माधुर्यता व प्रेम से लबालब भरना पड़ेगा। अपने आपको श्री मुख वाणी की कसौटी पर खरा उतरना पड़ेगा।

मीठी जुबा मीठे वचन, मीठा हक मीठा रूहों
प्यार ।
मीठी रूह पावे मीठे अर्स की, जो मीठा करे
विचार ।।

श्री राज जी की रसना बहुत ही मीठी है। उनसे निकलने वाले वचन भी बहुत मीठे हैं। अक्षरातीत स्वयं ही माधुर्यता का अनन्त सागर हैं। उनका अपनी अंगनाओं से प्रेम भी बहुत मीठा है। इसी प्रकार ब्रह्मसृष्टियां भी माधुर्यता के रस से ओत प्रोत हैं। परमधाम की इस मिठास का अनुभव उस आत्मा को होता है, जिसके चिन्तन में भी परमधाम की मिठास बसी होती है। ''मोमिन दिल कोमल कहया, तो अर्स पाया खिताब'' के कथन से स्पष्ट है कि जब तक हृदय मे कोमलता अर्थात् माधुर्यता का वास नहीं होता, तो परमधाम की माधुर्यता का अनुभव भी नहीं हो सकता।

श्री इन्द्रावती जी कहती हैं–

मीठी मीठी मांहें मीठी मीठी, रस रसीली रसना
बान ।
सुख सुख के मांहें कई सुख, क्यों कहू रसना
सुभान ।।

श्री राज जी की रसना से निकली हुई वाणी प्रेम रस से भरी रसीली है। जिसमें अनंत मिठास है। मिठास रूपी सागर की प्रत्येक तरंग के अन्दर भी अनेक प्रकार की माधुर्यता भरी हुई है। प्रत्येक लहर में अनेक प्रकार के सुख समाए हुए हैं।

तो सुन्दरसाथ जी अब हमें विचार करना है कि हमारे धनी, अक्षरातीत जब इतना मीठा बोलते हैं तो हम सभी सुन्दरसाथ को भी अपने हृदय में मिठास भरनी होगी और वो मिठास जब आ पाएगी तब स्वयं अक्षरातीत युगल स्वरूप हमारे धामहृदय में विराजमान होंगे। तभी हमारी वाणी भी इतनी मधुर होगी कि सुनने वालों पर भी असर करेगी।

।। प्रणाम जी ।।

पूज्य श्री राजन स्वामी जी के प्रवचनों के प्रेरणास्पद अंश

संकलन :
कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

ज्ञान से परिपक्व होकर विरह में तड़फने तथा परमधाम, युगल स्वरूप एवं अपनी परात्म की अनुभूति के पश्चात् ही परमधाम के सुखों की याद आती है। शुष्क हृदय से केवल वाणी पढ़ लेने मात्रा से इस अवस्था को नहीं पाया जा सकता।

***

धनी के प्रेम में समर्पित हो जाने पर मन में किसी प्रकार के हानि–लाभ का विचार नहीं आता। समर्पण के पर्वत से ही विरह और प्रेम के झरने फूटते हैं। इस अवस्था में भक्ति भी नहीं हो सकती। भक्ति का मूल्य तो मोक्ष या अन्य किसी प्रकार से मांगा जा सकता है किन्तु जिसने अपना सर्वस्व ही समर्पित कर दिया हो वो क्या मांगेगा?उसका तो अपना कोई अस्तित्व ही नहीं रहता।

***

मैं (खुदी) का तात्पर्य उस अहम् से है जो अपने आत्म स्वरूप को छोड़कर शरीर और अन्तःकरण पर केन्द्रित होता है। अपने भौतिक स्वरूप तथा उपलब्धियों के अस्तित्व की समाप्ति के बिना किसी को न तो अपने मूल स्वरूप का और न ही प्रियतम अक्षरातीत का बोध हो सकता है।

***

धन, यौवन और पद–प्रतिष्ठा सभी नश्वर हैं – आकाश में चमकती बिजली के समान। यदि कुछ शाश्वत है तो अखण्ड ब्रह्म ज्ञान जो शरीर और संसार छूटने के पश्चात् भी हमारे साथ रहता है।

***

सम्पूर्ण वाणी का सार है – ''हक नजीक सहरग से'' अर्थात् श्री राज जी हमारी प्राण नली से भी नजदीक हैं। फिर प्रश्न उठता है कि वे हमें दिखते क्यों नहीं है?इसका उत्तर है – हमारे और उनके बीच माया/संसार का पर्दा। इसे हटा दीजिये, वे अपने–आप ही दिखने लग जायेंगे। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम अपनी आत्म–दृष्टि से चितवनी कर युगल–स्वरूप की शोभा–सिंगार अपने हृदय में बसा लेवे।

***

श्री राज जी की मेहर का अर्थ सांसारिक धन–दौलत, पद–प्रतिष्ठा या पारिवारिक सुख की प्राप्ति नहीं है बल्कि वे हमारे दिल में इतना बस जाये कि उनके दिल की कोई बात हमसे अछूती न रहे, इसे 'मेहर' कहते हैं। अतः हमें अपनी लौकिक मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु मेहर सागर का गोटा पढ़ने की प्रवृत्ति को छोड़कर उक्त अवस्था को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये।

***

जब कभी भी हमारे मन में सांसारिक 'मैं' का भाव उत्पन्न हो तो उसे तुरन्त श्री राज जी की ओर मोड़ दे और मन में यह भाव लावें कि मैं श्री राज जी की हृदयांगना हूँ और वे मेरे प्राण प्रियतम हैं।

***

यदि हमें अक्षरातीत श्री राज जी का साक्षात्कार करना है तो ''मैं और मेरा'' छोड़ना होगा तथा ''तू और तेरा'' अपनाना होगा।

***

किसी नदी में स्नान करने या रोजे रखने से मन पवित्र व निर्विकार नहीं होता। इसके लिये आवश्यक है युगल–स्वरूप को हर पल अपने हृदय में महसूस करना।

***

हमारे हाथ में वाणी के रूप में ऐसा रिमोट कन्ट्रोल है जिससे हम माया–रूपी टी.वी. के पर्दे पर दुखों के चैनलों को परम आनन्द के चैनल से बदल सकते हैं। प्रयास कीजिये, कोई मुश्किल नहीं है।

ज्ञानपीठ सुविचार

यदि आप यही सच मानते हैं कि हमारी मृत्यु जिस समय और जिस स्थान पर निश्चित है
वहीं होकर रहती है, तो फिर एक बार चलती ट्रेन के सामने खड़े हो जाईये।
जिसका समय आ गया होगा वह बच नहीं सकता और नहीं आया होगा उसे कोई मार नहीं सकता।

***

परमात्मा का दिया हुआ दण्ड जीव के लिये ऐसा होता है जैसे कि रोगी को दी जाने वाली औषधि।
यह कड़वी होती है, पर रोग-निवारण के लिये आवश्यक होती है।
उसी प्रकार परमात्मा द्वारा दिया गया दण्ड पाप प्रवृत्ति को दूर करने के लिये होता है।
अतः परमात्मा दयालु भी है और न्यायकारी भी।

कुछ घरेलू नुस्खे

आचार्य सुभाष • धरमराज

- एक सेब नित्य खाने से डॉक्टर की आवश्यकता नहीं पड़ती। सेब भूखे पेट खाना चाहिए। यह गर्मी, खुश्की दूर करता है। इसका मुरब्बा हृदय, नेत्र, मस्तिश्क की कमजोरी हटाता है। नित्य प्रातः भूखे पेट सेब खाकर ऊपर से दूध पिया जाए तो एक–दो माह में त्वचा का रंग निखरेगा, चेहरेपर लाली झलकेगी। यौन सम्बन्धी कमजोरियाँ दूर होकर जीवन में स्फूर्ति दौड़ने लगेगी।
- एक आँवला दो संतरे के बराबर होता है।
- केला फल नहीं है, इसे रोटी की जगह खाना चाहिए।
- छुहारे में कैल्शियम बहुत मिलता है। छुहारे खाकर ऊपरे गर्म दूध पीएँ।
- आधा गिलास गाजर का रस, आधा गिलास दूध, स्वादानुसार शहद मिलाकर नित्य पीने से कमजोरी दूर होती है, रक्त बढ़ता है।
- गन्धक, पोटास, आयोडीन, कैल्शियम, लोहा, फास्फोरस, मैग्नीशियम, क्लोरिन आदि मूली में बहुतायत में मिलते है। एक मूली प्रातः नित्य पत्तों सहित खाते रहें। इससे फूर्ति, दाँत चमकीले, नाखून वृद्धि, हड्डियों में शक्ति तथा कमर आदि नहीं झुकेंगे।
- प्रातः नाश्ते में एक गिलास टमाटर के रस में थोड़ा शहद मिलाकर पिया जाए तो चेहरा टमाटर की तरह लाल निकल आएगा। टमाटर यकृत, फेफड़ों को शक्ति देता है। स्मरण शक्ति उच्च रक्तचाप, दस्त साफ, चर्म रोग तथा मोटापा रोकता है।
- चुकन्दर स्त्रियों का दूध बढ़ता है। जोड़ों का दर्द दूर करता है।
- आलुओं में मुर्गी के चूजों जैसी प्रोटीन होती है।
- मक्का के तेल निकालने की विधी– ताजी दूधिया मक्का के दानों को पीसकर काँच की शीशी में भरकर खुली हुई शीशी (बिना ढक्कन लगाए) धूप में रखें। दूध सुखकर उड़ जाएगा। और तेल शीशी में रह जाएगा। छानकर तेल को शीशी में भर लें और मालिश किया करें दुर्बल बच्चों के पैरों पर मालिश करनें से बच्चा जल्दी पैरों पर चलेगा । एक चम्मच तेल शर्बत में मिलाकर पीने से बल बढ़ता है।
- तिल और गुड़ समान मात्रा में मिलाकर लड्डू नित्य प्रातः–शाम खाकर दूध पीएँ। इससे शक्ति मिलती है। मानसिक दुर्बलता एवं तनाव दूर होते है। कठिन श्रम करने पर साँस नहीं नहीं फूलती तिल जल्दी बुढ़पा आने से रोकता है। जनवरी में तिल की चीजें खांए तथा तिल

के तेल की मालिश करें।

- 12 बादाम की गिरी रात को भिगों दें। सबेरे पीस लें।फिर कलईवाली पीतल की कढ़ाई में घी डालकर सेकें। लाल होने से पहले ही इसमें आधा पाव दूध डालें और इसे गर्म– गर्म जी जाएँ। इससे शरीर पुश्ट होगा, दुर्बलता दूर होगी।
- अखरोट खाने से मस्तिश्क की शक्ति बढ़ती है।
- गन्ना भोजन पचाता है। कब्ज दूर करतर है। शरीर मोटा करता है।
- अजवाइन, इलायची, काली मिर्च और सौंठ समान मात्रा में मिलाकर पीस लें। आधा चम्मच सुबह–शाम दो बार पानी के साथ फँकी लें। यह शक्ति वर्धक चूर्ण है।
- शहद में रक्त–निर्माण करने वाले तत्व होते है। शहद पाचन अंगों में वायु बनना रोकता है। प्रातः निबू और शहद गर्म पानी में लेने से स्फूर्ति प्रतीत होती है। बीमारी के बाद दुर्बल दूरबलता दूर करने के लिए दोपहर में खाना खाने के बाद एक चम्मच शहद लेने से दुर्बलता दूर होती है। नेत्र–ज्योति और रक्त बढ़ते है।
- भोजन करते समय नित्य कच्चा प्याज खाने से स्नायिक शक्ति बढ़ती है।
- पीपल वृक्ष–पीपल पर लगने वाले फल छाया में सुखा कर पीस कर मैदा की चलनी से छान लें। इसका चौथाई चम्मच 250 ग्राम दूध में मिलाकर नित्य पिएं इससे वीर्य बढ़ेगा तथा नपुंसकता दूर होगी। इसे यदि बन्ध्या स्त्री सेवन करें, तो सन्तान उत्पन्न होगी। मासिक धर्म के विकार और श्वेत प्रदर ठीक होगा। कब्ज दूर होगा।
- बरगद–काम–शक्तिवर्धक एवं शुर्कवर्धक गुण बरगद में है। बरगद के वृक्ष में लाल–लाल छोटे–छोटे बेर के समान फल लगते हैं। बदगद के पेड़ के ये लाल–लाल पके हुए फल हाथ से तोड़े। जमीन पर गिरे हुए न लें। इनको जमीन पर कपड़ा बिछा कर छाया में सुखाएँ। सूखने के बाद पत्थर पर पीसकर पाउडर बना लें। सुखाते समय पीसते समय लोहे का उपयोग नहीं होना चाहिए। लोहे से इन्हे नही छूना हैं। इस पाउडर के तोल के बराबर पिसी हुई मिश्री मिला लें। मिश्री भी पत्थर पर ही पीसें। भली प्रकार मिश्री और बरगद के फलों के पाउडर को मिलाकर मिट्टी के बरतन में सुरक्षीत रखें। इसकी आधी चम्मच सुबह–शाम दो बार गर्म दूध से फँकी लें। इससे शीघ्र पतन समाप्त होकर काम–शक्ति प्रबल हो जाती है। बच्चे पैदा करने वाले कीटाणु (चमतउे) यदि वीर्य में न हो तो बच्चे पैदा करने वाली कीटाणु पैदा हो जाते हैं।
- बड़ की कली, डंठल को तोड़कर इससे निकलने वाले दूध की पाँच बूँद एक बताशे पर टपका कर खा जाएँ। इस प्रकार चार बताशे नित्य खाएँ। यह सर्योदय से पहले खाएँ। नित्य दूध की एक बूँद बढ़ाते जाए। इस प्रकार दस दिन लेकर फिर एक बूँद नित्य कम करते जाएँ। इस प्रकार बीस दिन यह प्रयोग करने से वीर्य का पतलापन, प्रमेह, स्वप्नदोश ठीक हो जाते हैं।
- चिलगोजे– यह सूखा मेवा (Dry-fruit) है जो पंसारी के यहाँ मिलता है। चिलगोजे में काम–शक्ति बढ़ाने की शक्ति है। यह अत्यधिक मर्दाना शक्तिवर्धक मर्दाना है। वह

पुरूश जो अपने आप को नामर्द प्रतीत करता हुआ उदास रहता है, नियमित रूप से बीस ग्राम चिलगोजे दो माह खाकर मर्द बन सकता है। यदि कोई कुछ अधिक मात्रा में तथा लम्बे समय तक खाना चाहे तो खाए, कोई हानि नहीं होगी। सर्दी के मौसम में ज्यादा लाभकारी है।

- अखरोट– सर्दी में मौसम में सवेरे अखरोट का पेय बनाकर पीना चाहिए। इससे दिमाग बहुत अच्छा हो जाता है। नींद बहुत सुखद आती है। कब्ज दूर होती है तथा चेहरे की कान्ति में चार चाँद लग जाते हैं, इसके साथ यह वीर्य–पुश्टिकर एवं वृद्धि करने वाला पेय है।
- फालसा– धातु–दौर्बल्य पर फालसे का शरबत कुछ दिनों दिनों तक पीना चाहिए।
- अरबी– यह वीर्य को गाढ़ा करती है, संभोग शक्ति बढ़ाती है। इसकी सब्जी बना कर खाएँ। जिनको पेशाब करते समय लार–सी निकलती है, उनके लिए अधिक लाभदायक है। इसकी सब्जी में भी लार, चिपचिपाहट प्रकृति ने मानव के इस दोश को दूर करने के लिए पैदा किया है।
- इमली– इमली काम में लेने के बाद इसके बीजों को प्रायः फेंक देते हैं। इसके बीजों को फेंकना नहीं चाहिए। ये बहुत लाभदायक हैं। 250 ग्राम इमली के बीज भाड़ मं भुनवा लें या घर में ही सेक लें। फिर इनको कूटकर छिलका उतार लें। इसमें 250 ग्राम बूरा (खांड) मिला लें। इसके दो चम्मच नित्य प्रातः गर्म दूध से फँकी लें। यह स्वप्नदोश और मर्दाना–शक्ति बढ़ाने में लाभदायक हैं। स्त्रियों का प्रदर भी इससे ठीक हो जाता है।
- 250 ग्राम इमली के बीज चार दिन पानी में भिगोएँ और फिर छिलके उतार कर छाया में सुखाएँ। सूखने पर पीस कर समान भाग मिश्री मिलाकर पीसें। चौथाई चम्मच नित्य दूध से दो बार सुबह–शाम इसकी फँकी लें। 50 दिन सेवन करने से शीघ्र पतन दूर हो जाएगा। वीर्य गाढ़ा होगा।
- टंजीर– चार अंजीर थोड़े से पानी में चार घंटे भिगोएँ, फिर यह पानी और अंजीर एक गिलास दूध में उबाल कर नित्य रात को सेवन करें। मर्दाना शक्ति बढ़ेगी।
- आँवला– हस्तमैथुन से धातु पतली हो गई तो युवकों को सलाह है कि वे हस्तमैथुन की आदत छोड़ दें। आँवला तथा हल्दी समान मात्रा में पीसकर घी डाल कर सेकें और भूनें। सिकने के बाद इसमें दोनों के वनज के बराबर पिसी मिश्री मिला लें। चाय के एक चम्मच भर सुबह–शाम दो बार गर्म दूध से इसकी फँकी लें। धातु–दौर्बल्य दूर होगा।
- असगंध– कसंग, हस्तमैथुन से उत्पन्न दुर्बलता में आधा चम्मच असगंध की फँकी नित्य सुबह–शाम गर्म दूध से लेने से ठीक हो जाती है। मर्दाना शक्ति बढ़ती है। आँवले के प्रयोग को भी करें।
- हल्दी– कच्ची हल्दी का रस दो चम्मच, समान भाग शहद में मिलाकर एक बार रोजाना पिएँ। 2 पिसी हुई 250 ग्राम गाय या भैंस के घी में सेक कर इसमें पिसी हुई 250 ग्राम मिश्री मिला लें। नित्य राज को गर्म दूध से फँकी लें। मर्दाना शक्ति बढ़ेगी।
- दूध– तीन माह तक लगातर रात्रि को दूध पीने से यौन या कामक्रिया की दृश्टि से स्त्री–पुरूशों की यौनेच्छा और काम–शक्ति के

साथ साथ यौन क्रिया की अवधि में भारी वृद्धि हो जाती है। 25 से 45 वर्श की आयु के विवाहित स्त्री पुरूश पर उक्त विधि का प्रयोग करने के उपरान्त चर्म, यौन एवं रति–रोग विशेज्ञ डॉ. वीरेन्द्र सिंह इस नतीजे पर पहुँचे। उन्होंने शारीरिक दृश्टि से पूर्ण रूप से स्वस्थ किन्तु ठंडेपन के शिकार अनेक जोड़ों को दूध सेवन के उपरान्त यौन–क्रिया के प्रति अति उत्साही पाया और इस नतीजे पर पहुँचे कि रात्रि को दूध पीना न केवल शारीरिक किन्तु यौन–सम्बन्ध के प्रति उत्साह जगाने के लिए भी लाभदायक रहता हैं। दूध में शहद मिलाकर पीने से वीर्य बढ़ता हैं।

- अनार– प्रतिदिन मीठा अनार खाने से पेट मुलायम रहता है तथा कामेन्द्रियों को बल मिलता है।
- १० सिंघाड़ा– नित्य तीन चम्मच सिंघाड़ा के आटे की फँकी गर्म दूध से लेकर सोएँ। इससे पतला वीर्य गाढ़ा हो जाता है तथा मर्दाना–शक्ति बढ़ती है।
- लहसुन– नित्य 15 बूँद लहसुन का रस एक कप पानी में मिलाकर तीन सप्ताह तक पिएँ तथा इस अवधि में पूर्ण ब्रह्मचर्य रखें।
- तुलसी– 1 तुलसी की जड़ का छोटा सा टुकड़ नित्य दो माह चूसें । तुलसी के बीज आधा चम्मच नित्य दूध से फंकी लें।
- दूध– 250 ग्राम दूध मं 5पिसे हुए बादाम और एक चम्मच देसी घी डालकर पत्न–सहवास के बाद पीने से बल मिलता है।
- जलेबी– जलेबी पौश्टिक खाद्य हैं। अधिक स्त्री–प्रसंग से दुर्बल पुरूश को शीघ्र शक्ति देती हैं।
- अमचूर– अधिक अमचूर खाने से धातु दुर्बल होकर नपुंसकता आ जाती है।
- पान– पान खाने से उत्तेजक आती है। यह उत्तेजना सुपारी में पाए जाने वाले ऐरेकोलिन नामक पदार्थ से मिलती है। पान में लगा चूना इस प्रक्रिया को बढ़ता है।
- खटाई और मिर्च अधिक खाने से वीर्य के जीवाणु नश्ट हो जाते है।
- आँवला– तीन चम्मच हरे आँवले का रस, तीन चम्मच शहद, एक कप हल्का गर्म पानी मिला कर नित्य पीएँ। सभी प्रकार के वीर्य विकार नश्ट हो जाएँगे। शुक्र–वृद्धि में सहायता मिलेगी।
- छुहारा– दो छुहारे दूध में उबालकर खाएँ, दूध पी जाएँ। शुक्राणुओं की संख्या बढ़ेगी।
- कालीमिर्च– प्रातः 5 काली मिर्च पान में रखकर चबाएँ और धीरे–धीरे रस चूसें, इसके बाद एक कप गर्म दूध में एक चम्मच घी मिलाकर पिएँ। इससे वीर्य शुद्ध होता है। और वीर्य में शुक्राणुओं की वृद्धि हाती है। इसका संवन 40 दिन करें। इसका सेवन जितना अधिक किया जाएगा, उतना अधिक लाभ होगा।
- सिरस– सिरस एक बड़ा पेड़ होता है। सिरस की छाल और फूल समान मात्रा में पीसकर एक महीने तक नित्य एक चम्मच सुबह–शाम गर्म दूध से फँकी लें। वीर्य गाढ़ा हो जाएगा और मर्दाना शक्ति बढ़ेगी। तथा शुक्राणु भी बढ़ेगी।
- पीपल– पीपल के गूलरों (फलों) को छाया में सुखा लें। इनको पीस लें। इसकी एक चाय

चम्मच गर्म दूध से फँकी लें। यह दो महीने लगातार लें। पीपल के गूलरों के सेवन से शुक्रकीट पैदा होते हैं। निर्बल शुक्रकीट बलिश्ठ होते है। मरणासन्न शुक्रकीट पुनः जीवित होने लगते हैं। पुरूश सन्तोत्पत्ति के योग्य बन जाता है।

- फालसा– कच्चे फालसा शुक्रनाशक होते है। पके हुए फालसे शुक्रजनक होते है। शुक्र–दौर्बल्य से पीड़ित को भी फालसे का सेवन करने से लाभ मिलता है।

- बथुआ– बथुआ शुक्रवर्धक है। बथुआ सुखा कर भी रखें, जब हरा न मिले तो सूखा बथुआ सब्जी, रोटी में मिलाकर खाएँ।

- प्याज– सफेद प्याज का रस चौथाई कप, अदरक का रस आधा चम्मच, शहद एक चम्मच, घी आधा चम्मच सबको मिलाकर सुबह–शाम पीएँ। यह वीर्य की कमी, शीघ्र–पतन, स्वप्न–दोश में लाभकारी है।

- बबूल– 1. बबूल की कच्ची फलियों को छाया में सुखाकर पीसकर इस तोल की दुगुनी मात्रा मिश्री मिलाकर आटा छानने की चलनी से छान कर एक चौड़े मुँह की काँच की बोतल में भर लें। इसके दो चम्मच सुबह–शाम, गर्म दूध से 5 माह फँकी लें। यह अच्छा वीर्य–वर्धक प्रयोग है। 2. बबूल का गोंद सौ ग्राम, शक्कर 70 ग्राम दोनों को पीसकर एक चम्मच सुबह–शाम दो माह ठंड़े पानी से फँकी लें। इससे वीर्य का पतलापन दूर होगा, स्वप्न दोश नहीं होगा।

- शकरकन्दी– रोजाना 250 ग्राम शकरकन्दी पानी में उबाल कर या आग की भोभल में सेक कर खाएँ। इससे वीर्य बढ़ता है, गाढ़ा होता है तथा मर्दाना–शक्ति बढ़ती है।

- अजवाइन– अजवाइन और मिश्री समान मात्रा में पीस कर मिला लें। इसकी आधा चम्मच नित्य सुबह–शाम गर्म दूध से फँकी लें। इससे वीर्य दोष नष्ट होकर धातु पुष्ट होती है।

- छाछ– नियमित खाने के बाद छाछ पीने से वीर्य वृद्धि होती है।

- तरबूज, आलू, सेम, फूलगोभी, टमाटर, चुकन्दर, बन्दगोभी, भिण्डी, पेठा– वीर्यवर्धक हैं, वीर्य को गाढ़ा करते हैं तथा यौन–शक्ति बढ़ाते हैं।

- नीबू– नीबू से मिलने वाला विटामिन 'ए' नेत्र–विकार ठीक करता है। विटामिन 'बी' पाचन–शक्ति ठीक करता है और विटामिन 'सी' रक्तविकारों को ठीक करता है।

- टमाटर– 'डिजीज एण्ड डायर' के लेखक डॉ. एस. जे. गजदर ने लिखा है कि टमाटरमें विटामिन 'ए', 'बी', 'सी' (A,B,C) इतनी अधिक मात्रा में मिलते हैं जितने सन्तरा और अंगूर में नहीं मिलते। यह सन्तरा, अंगूर से भी ज्यादा लाभदायक है। इसमें पाए जाने वाले विटामिन गर्म करने से नश्ट नहीं होते हैं। टमाटर में विटामिन 'ए' अधिक पाया जाता है। प्रतिदिन चार लाल टमाटर खाने से शरीर को जितने विटामिन 'ए' की आवश्यकता होती है, मिल जाता है। टमाटर में विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में मिलता है जो शरीर में विद्यमान विजातीय तत्त्वों को निकालता है। टमाटर में रिबोफ्लोविन पाया जाता है जो कि विटामिन 'बी' कॉम्पलेक्स का ही रूप है।

शेष अगले अंक में ...

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी ज्ञानपीठवासियों, विद्यार्थियों, आचार्यों एवं आगुन्तक अतिथियों में निशुल्क किया जाता है। आप सभी सुन्दरसाथ एवं उदारमना दानदाताओं से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, रहने के लिए उत्तम व्यवस्था हो, उसके लिए आधुनिक ढ़ंग से गौशाला का निर्माण कार्य होने जा रहा है, इसके लिए जो भी सज्जन एवं सुन्दरसाथ दान देना चाहें ज्ञानपीठ उनका स्वागत करता है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं, और आप आने में असमर्थ हैं तो कृपया ज्ञानपीठ के खाते पर राशि जमा करके सूचित कर सकते हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके द्वारा दिया गया दान गौवों के संवर्धन में ही लगाया जायेगा।

।।धन्यवाद।।

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा के आचार्यों, प्रचारकों एवं विद्यार्थियों के द्वारा श्री बीतक साहिब चर्चा

1 **आचार्य हिरालाल जी**
स्थान–गोरखपुर

2 **आचार्य चन्द्र जी**
स्थान–श्री प्राणनाथ जी मंदिर, शुक्लाई, आसम

3 **आचार्या किरन बहन जी एवं श्रीमती स्वदेश बहन जी** (चौपाई वाचन)
स्थान–श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, भावदास मोहोल्ला, वडोदरा

4 **महात्मा चंचलदास जी एवं अभिषेक जी**
(चौपाई वाचन)
स्थान–बोतराई, मध्यप्रदेश

5 **श्रीमती ज्योति बहन जी एवं आदित्य जी**
(चौपाई वाचन)
स्थान–कुरडी, सहारनपुर

6 **श्रीमती ज्योत्स्ना बहन जी**
स्थान–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

7 **आचार्य अशोक जी**
स्थान–माडल टाउन, दिल्ली

8 **आचार्य सुभाष जी**
स्थान–श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, शिवपुरी, गुना,मध्यप्रदेश एवं खरेड़ी, दाहोद, गुजरात।

9 **आचार्य अर्जुन जी**
स्थान–पिप्लोद श्री प्राणनाथ जी मंदिर, नानी खजुरी, उमरिया मंदिर।स्थान दाहोद, गुजरात

10 **आचार्य सूर्यप्रताप जी**
स्थान–हिम्मतनगर, गुजरात

11 **आचार्य करण जी**
स्थान–श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र,पन्ना

12 **आचार्य पुकार जी एवं रजनीश जी**
(चौपाई वाचन)
स्थान–लखनऊ

13 **आचार्य शशांक जी एवं धरमराज जी**
(चौपाई वाचन)
स्थान–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

अन्य स्थान– चंदपुर, सहारनपुर एवं मंगमाया, दार्जिलिंग, पश्चिम बंगाल

15 **धर्मप्रचारक घनश्याम जी**
स्थान–आबूखैरीनी, गोरखा, नेपाल

16 **श्रीमती शोभाजी एवं लक्ष्मी जी**
स्थान–रामनगर, नेपाल

17 **कृष्ण जी**
स्थान–ठोहोरी, रामनगर, नेपाल

18 **रामेश्वर जी एवं सत्यम् जी**
स्थान–पीलीभीत

19 **गणेश जी एवं जनार्दन जी**
स्थान–झरौली, सरसावा, सहारनपुर

20 **श्रीमती राजबाला जी एवं राजदीपक जी**
स्थान–बेहट, सहारनपुर

तामतम मंजरी के पाठकों से निवेदन

प्राणाधार श्री सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आप की प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं तांकि श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी (ब्रह्मज्ञान) का सन्देश जन–जन तक पहुँच सके तथा तारतम वाणी के कल्याण कारी वचनों को पढ़कर प्रत्येक मानव सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं निजानंद विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे और आत्मिक कल्याण हेतु सच्चिदानन्द परब्रह्म के चरणों में आये।

सुन्दरसाथ जी! हम इस पत्रिका की लाभ–हानि की बात नहीं कर रहे हैं। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि आर्थिक सहयोग भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रूका रहता है, पुनरपी उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अतः ऐसे सज्जनों से निवदन है कि श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ के साहित्य बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप सुन्दरसाथ जी वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

धन्यवाद

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232

MICR-Code - 247016005

IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य	क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	श्री कुलजम स्वरूप (मूल)	700.00	36.	बोध मंजरी (नेपाली)	15.00
2.	श्री बीतक साहेब टीका	400.00	37.	बोध मंजरी (उड़िया)	15.00
3.	श्री रास टीका	150.00	38.	शाश्वत सत्य की ओर	15.00
4.	श्री प्रकाश टीका	300.00	39.	सत्य को बाटो (नेपाली)	15.00
5.	श्री कलश टीका	225.00	40.	संसार से परमधाम की ओर	20.00
6.	श्री खटरूती टीका	80.00	41.	श्री प्राणनाथ महिमा	20.00
7.	श्री किरन्तन टीका (हिन्दी)	300.00	42.	श्री ब्रह्मवाणी चर्चा	65.00
8.	श्री किरन्तन टीका (अंग्रेजी)	350.00	43.	निजानन्द संस्कार पद्धति	15.00
9.	श्री किरन्तन टीका (नेपाली)	300.00	44.	सेवा पूजा	30.00
10.	श्री खुलासा टीका	250.00	45.	मूल स्वरूप की ओर	80.00
11.	श्री सनंध टीका (अप्रकाशित)		46.	चितवनी	5.00
12.	श्री खिलवत टीका	180.00	47.	आर्ष ज्योति	120.00
13.	श्री परिक्रमा टीका	275.00	48.	तारतम के निर्झर	70.00
14.	श्री सागर टीका	170.00	49.	तारतम पीयूषम्	70.00
15.	श्री सिनगार टीका	300.00	50.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
16.	श्री सिन्धी टीका	150.00	51.	खाद्य परिशीलन	250.00
17.	श्री मारफत सागर टीका (अप्रकाशित)		52.	विनाश का प्रर्याय मांसाहार	60.00
18.	श्री क्यामत नामा टीका (अप्रकाशित)		53.	विराट नक्शा (केलेण्डर रूप में)	50.00
19.	श्री मुखवाणी संगीत	150.00	54.	सौवं क्यामतनामा	90.00
20.	विद्वददमनी	200.00	55.	अनमोल मोती	5.00
21.	पट दर्शन	200.00	56.	सागर के मोती	10.00
22.	धाम सुषमा	60.00	57.	नित्य पाठ	5.00
23.	जागो और जगाओ	100.00	58.	ये स्वर्णिम पल	10.00
24.	दोपहर का सूरज	60.00	59.	मुख्तार हिन्द	20.00
25.	प्रेम का चाँद	65.00	60.	शब–ए–मेयराज	15.00
26.	निजानन्द योग	60.00	61.	अफलातूनी इलम	20.00
27.	हमारी रहनी	50.00	62.	बुलन्द मुकदमा	40.00
28.	ब्रह्माण्ड रहस्य	40.00	63.	झूठ ही झूठ	60.00
29.	श्री मद्भागवत यथार्थम्	30.00	64.	यथार्थ दीपिका	30.00
30.	ध्यान की पुष्पांजली	70.00	65.	प्रश्नमाला	5.00
31.	कड़वे सच	50.00	66.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
32.	तमस के पार (बड़ी)	40.00	67.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
33.	तमस के पार (छोटी)	20.00	68.	फरमान	30.00
34.	तमस के पार (पंजाबी)	40.00	69.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
35.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00	70.	सत्यांजलि	40.00

सुभाषित वचन

- विवेक, वैराग्य, अभ्यास और श्रद्धा आत्मिक साधना के मूल आधार स्तंभ है।
- जब तक नाशवान् वस्तुओं में आसक्ति या सत्यता दिखेगी, तब तक परम सत्य का बोध नहीं हो सकता है।
- कमियां निकालना छोड़िए, प्रशंसा करने की आदत डालिए। प्रशंसा और प्रोत्साहन पाकर तो चींटी भी पहाड़ लाँघ जाया करती है।
- ज्ञान का अभ्यास न करने से, भोगों में आसक्त रहने से, चरित्र के नाश से, अभिमान के कारण दूसरों का तिरस्कार करने से, देवता भी पछताते हैं। मनुष्य तो क्या?

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपूर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,